भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि का रिकॉर्ड, 1950-2008 : निरंतर बचत और निवेश की गाथा*

राकेश मोहन

'भारत में वृद्धि और समष्टि आर्थिक मुद्दे एवं चुनौतियाँ' विषय पर इस गौरवशाली सम्मेलन में प्रमुख भाषण देने के लिए आर्थिक वृद्धि संस्थान का दौरा मेरे लिए एक गौरव की बात है। मुझे विशेष खुशी है कि संस्था अपने स्वर्ण जयंती समारोह के रूप में यह सम्मेलन आयोजित कर रही है। संस्थान ने अपने 50 वर्ष के इतिहास में लगातार आर्थिक अनुसंधान के लिए योगदान देने का एक लंबा और विश्वसनीय रिकार्ड बनाया है। इसके अनुसंधान ने वर्षों के दौरान आर्थिक नीति के संचालन और निर्माण के वाद-विवाद को बहुत अधिक परिष्कृत बनाया है।

सम्मेलन के लिए चुनी गई विषयवस्तु वर्तमान संदर्भ में उचित है क्योंकि हम अब तक वर्धित वृद्धि की गति को निरंतर बनाए रखने के मुद्दों और चुनौतियों से जूझ रहे हैं। वैश्विक वृद्धि में प्रत्याशित कमी को देखते हुए अमरीका और कुछ अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अनुमानित मंदी के कारण इसने और अधिक सामयिक महत्ता प्राप्त कर ली है। जबकि भारत सहित उभरती अर्थव्यवस्थाओं पर अब तक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय उथल-पुथल ने बहुत अधिक प्रभाव नहीं ड़ाला है, बढ़ती वैश्विक अनिश्चितताओं पर समुचित निगरानी रखने और उसके विरुद्ध सुरक्षा किए जाने की आवश्यकता है। यद्यपि हमारी वृद्धि प्रक्रिया पर घरेलू कारक हावी रहे हैं, हमें ऐसे कुछ बदलते वैश्विक पैटर्न को पहचानने की आवश्यकता है जिसके भारतीय अर्थव्यवस्था की समष्टि आर्थिक संभावनाओं के लिए निहितार्थ हो सकते हैं। तदनुसार, संबोधन में, मैं भारत में आजादी से लगाकर समग्र समष्टि आर्थिक कार्य निष्पादन की पहले

*14 फरवरी 2008 को आर्थिक वृद्धि संस्थान, नई दिल्ली द्वारा 'भारत में वृद्धि और समष्टि आर्थिक मुद्दे और चुनौतियां' विषय पर आयोजित सम्मेलन में भारतीय रिज़र्व बैंक के उप गवर्नर डॉ. राकेश मोहन द्वारा दिया गया प्रमुख भाषण। भाषण तैयार करने में माइकल पात्रा, जनकराज, धृतिद्युति बोस, विनोद बी. भोई और मुनीश कपूर द्वारा दिया गया सहयोग सराहनीय है।

समीक्षा करूँगा, इसके पश्चात् आगामी पाँच वर्षों के लिए संभावनाओं पर चर्चा करूँगा और अंत में, ऐसे कुछ मुद्दों पर चर्चा करूँगा जो भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि को बनाए रखने के लिए जरूरी हैं।

I भारतीय वृद्धि प्रक्रिया की समीक्षा

दशकों में हुई वृद्धि दर में बढ़ोत्तरी

ऐसा बड़े पैमाने पर माना जाता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में 1970 के दशक के अंतिम भाग तक वास्तविक जीडीपी वृद्धि में लगभग गतिहीनता दिखी। तथापि, भारतीय अर्थव्यवस्था के कार्यनिष्पादन की सूक्ष्मतर समीक्षा करने पर पता चलता है कि वास्तविक जीडीपी वृद्धि में, 1970 के दशक के बीच की स्थिति को छोड़कर आजादी से हरेक दशक में लगातार वृद्धि हुई है (सारणी 1)। दिलचस्प बात है कि दशकीय औसतों के अनुसार विनिर्माण उत्पादन की वृद्धि, 1970 के दशक को छोड़कर आजादी के पश्चात पहले पाँच दशकों में मोटे तौर पर 5.6-5.9 प्रतिशत के लगभग स्थिर रही। हमारे वृद्धि के इतिहास की ध्यान देने योग्य दो अन्य विशेषताएं हैं। एक, 1970 के दशक के बीच की स्थिति में विशेष रूप से कृषि की वृद्धि में अत्यंत गिरावट आयी, इसके पश्चात् 1980 के दशक में उल्लेखनीय सुधार हुआ और इसके बाद फिर गिरावट आयी। दो, 1990 के दशक तक, सेवा क्षेत्र में वृद्धि पर बहुत कम ध्यान दिया गया। वृद्धि पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि दशकों में सेवाओं की वृद्धि में निरंतर और संबद्ध बढ़ोत्तरी हो रही है, जिसकी पहले उपेक्षा की जाती थी, एक बार फिर, जो 1970 के दशक के बीच की स्थिति को छोड़कर, वास्तव में समग्र जीडीपी वृद्धि में निरंतर बढ़ोत्तरी को दर्शाती है। पिछले दशक में सेवा क्षेत्र की वृद्धि के बारे में कुछ भी विशेष नहीं है।

1970 के दशक के दौरान वृद्धि में हुई गिरावट 1980 के दशक के दौरान उलट गई, इस तेजी को बढ़ती घरेलू प्रतिस्पर्धा को लक्ष्य करके शुरू किए गए कुछ सुधार उपायों से लाभ मिला। 1990 के दशक के प्रारंभ से, अर्थव्यवस्था के कई क्षेत्रों में किए गए व्यापक सुधारों के पश्चात वृद्धि में और अधिक गति आई। 1990 के दशक के उत्तरार्ध में वृद्धि की गति में कुछ कमी आई, जिस दौरान पूर्व एशियन वित्तीय संकट की शुरुआत, राजकोषीय सुधार प्रक्रिया को झटका, राजकोषीय समायोजन की गुणवत्ता, सामान्य मानसून वर्षों की तुलना में कम वर्षा से प्रभावित कृषि वृद्धि में मंदी और संरचनात्मक सुधारों की गति में कुछ धीमेपन की स्थिति थी । इस मंदी के लिए, अविनियमन के फलस्वरूप घरेलू उद्योग में निवेश योजनाओं संबंधी अत्यधिक उत्साह और आशावाद को भी उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, इसके बाद व्यवहार्यता और प्रतिस्पर्धा में अनुभव की गई बड़ी समस्याएं आईं। ऐसा माना जाता है कि मुद्रास्फीतिकारी दबावों की मौजूदगी के साथ मौद्रिक कड़ाई ने भी इस अवधि में मंदी में कुछ योगदान दिया।

2003-04 से वृद्धि गति में स्पष्ट मजबूती रही है। घरेलू उद्योग द्वारा पुनर्संरचना उपाय, नाममात्र और वास्तविक दोनों घरेलू ब्याज दरों में समग्र कमी से कंपनी लाभदायकता में सुधार हुआ, सुदृढ़ वैश्विक मांग और प्रतिबद्ध नियमों पर आधारित राजकोषीय नीति के बीच नरम निवेश वातावरण से वास्तविक जीडीपी वृद्धि का औसत 2006-07 को समाप्त 4 वर्षीय अवधि में प्रति वर्ष 9 प्रतिशत के करीब रहा है; पिछले दो वर्षों में वृद्धि का औसत प्रति वर्ष 9.5 प्रतिशत है।

सारणी 1 : समष्टि आर्थिक संकेतक एक नजर में

(प्रतिशत)

	1950 का दशक*	1960 का दशक*	1970 का दशक*	1980 का दशक*	1990 -91	1991/92 से 1996-97	1997/98 से 2002/03	2003/04 से 2006/07	2007-08 अ.अनु.
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1. वास्तविक जीडीपी वृद्धि	3.6	4.0	2.9	5.6	5.3	5.7	5.2	8.7	8.7
कृषि और संबद्ध	2.7	2.5	1.3	4.4	4.0	3.7	0.9	4.9	2.6
उद्योग	5.8	6.2	4.4	6.4	5.7	7.0	4.1	8.3	8.6
विनिर्माण	5.8	5.9	4.3	5.8	4.8	7.5	3.9	9.1	9.4
सेवाएं	4.2	5.2	4.0	6.3	5.9	6.4	7.8	10.2	10.6
2. वास्तविक जीडीसीएफ/जीडीपी	12.5	16.9	19.4	20.2	24.4	22.5	24.1	31.4	NA
3. आइसीओआर	3.5	4.3	6.6	3.6	4.6	4.0	4.6	3.6	NA
4. नाममात्र जीडीसीएफ/जीडीपी	10.8	14.3	17.3	20.8	26.0	23.9	24.5	33.0	NA
5. जीडीएस/जीडीपी	9.6	12.3	17.2	19.0	22.8	22.7	24.1	32.7	NA
6. बचत-निवेश अंतर/जीडीपी (5-4)	-1.2	-2.0	-0.1	-1.8	-3.2	-1.2	-0.4	-0.3	NA
7. एम$_3$ वृद्धि	5.9	9.6	17.3	17.2	15.1	17.5	15.9	16.8 @	23.8 #
8. अनु. वाणि. बैंकों की खाद्येतर ऋण वृद्धि	-	-	17.5	17.8	12.4	16.2	15.3	26.5 @	23.1 #
9. सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश में वृद्धि	12.4 ^	5.6	20.8	19.4	18.2	21.5	22.0	10.2 @	26.7 #
10. थोमूसू मुद्रास्फीति (औसत)	1.2	6.4	9.0	8.0	10.3	9.6	4.6	5.5	4.1 ##

अ.अनु: अग्रिम अनुमान.

@ : बैंकिंग प्रणाली में विलयन और परिवर्तनों के लिए समायोजित। 2005-06 की घटबढ़ को 1 अप्रैल 2005 से लिया गया है।

* : 1950 के दशक के विभिन्न संकेतकों की वृद्धि दरों का औसत नौ वर्षों अर्थात् 1951-52 से 1959-1960 का औसत है। वृद्ध

^ : 1952-53 से 1959-60 का औसत। # : 18 जनवरी 2008 (वर्ष-दर-वर्ष) के अनुसार। ## : 26 जनवरी 2008 (वर्ष-दर-वर्ष) के अनुसार।

बचतों और निवेश में लगातार वृद्धि

भारतीय अर्थव्यवस्था का वृद्धि रिकार्ड विश्लेषित करने के लिए 1980 के दशक से, "पारंपरिक" कम वृद्धि से आधुनिक उच्च वृद्धि के परिवर्तनों की पहचान करने के लिए गंभीर प्रयत्न[1] किए गए हैं। यहाँ प्रस्तुत किए गए आँकड़ों का सामान्य क्रम 1970 के दशक को छोड़कर वृद्धि में निरंतर धीमी बढ़ोत्तरी की एक भिन्न तस्वीर पेश करता है। इस निरंतर वृद्धि को कैसे स्पष्ट किया जा सकता है ? घरेलू वृद्धि में निरपेक्ष ऊर्ध्वगामिता स्पष्ट रूप से दशकों से बढ़ रही घरेलू बचतों और निवेश के संबद्ध रुझानों से जुड़ी हुई है। सकल घरेलू बचतें, 1950 के दशक के दौरान जीडीपी के 9.6 प्रतिशत के औसत से वर्तमान में जीडीपी के लगभग 35 प्रतिशत लगातार बढ़ी हैं; इसी अवधि में घरेलू निवेश दर 1950 के दशक के 10.8 प्रतिशत से लगातार बढ़कर 2006-07 में 36 प्रतिशत के करीब हो गई। बचतों और निवेश दरों में इन रुझानों की एक बहुत बड़ी विशेषता है कि भारतीय आर्थिक वृद्धि को प्रमुखता से घरेलू बचतों द्वारा वित्तपोषित किया जाता रहा है। विदेशी बचतों - समान रूप से चालू खाता घाटे - का भारतीय वृद्धि प्रक्रिया में अपेक्षाकृत कम सहारा लिया गया है। हमें ध्यान देना होगा कि 1960 और 1980 के दशकों, जब चालू खाता घाटा मामूली रूप से बढ़कर जीडीपी का 2 प्रतिशत हो गया, के पश्चात काफी अधिक भुगतान संतुलन और आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा।

तथापि, बचतों और निवेश में दीर्घकालिक ऊर्ध्वगामी रुझान विराम अवस्थाओं के बीच बिखरा

[1] देखें, उदाहरण के लिए, डेलाँग (2003) पनागारिया (2004), रोड्रिक और सुब्रमणियन (2004) और वीरमणि (2004)।

हुआ है। विशेष रूप से, 1980 के दशक के दौरान, बढ़ते व्यय के अनुरूप सरकारी राजस्व के न बढ़ने का परिणाम समग्र संसाधन अंतर बढ़ने के रूप में हुआ। तदनुसार, सार्वजनिक क्षेत्र का बचत-निवेश अंतर, जिसका 1950-51 से 1979-80 की अवधि के दौरान औसत जीडीपी का (-) 3.7 प्रतिशत था, 1980 के दशक के दौरान तेजी से बढ़ा, तथा 1990-91 में जीडीपी के (-) 8.2 प्रतिशत की ऊँचाई पर पहुँच गया। सार्वजनिक क्षेत्र की परिणामी उच्चतर उधार आवश्यकताओं ने बाजार समाशोधन ब्याज दरों से कम पर वित्तीय मध्यस्थों से बढ़े हुए सांविधिक पूर्वक्रयों के माध्यम से घरेलू क्षेत्र के वित्तीय अतिरेकों को टैप करने के लिए सरकार को प्रेरित किया। चूँकि 1970 के दशक की शुरुआत में राजकोषीय घाटा बढ़ा, बढ़ते राजकोषीय अंतर के वित्तपोषण के लिए सांविधिक चलनिधि अनुपात में आवधिक वृद्धियां की गईं जो वित्तीय कड़ाई व्यवस्था का परिचायक हैं। 1950 के दशक के प्रारंभ में 20 प्रतिशत एसएलआर को बढ़ाकर 1964 में 25 प्रतिशत किया गया और यह शेष दशक में इसी स्तर पर बना रहा। 1970 के दशक की शुरुआत में, एसएलआर का और अधिक सक्रियता से प्रयोग किया गया और इसे 1970 के दशक के अंतिम भाग तक चरणों में बढ़ाकर 34 प्रतिशत किया गया। चूँकि राजकोषीय घाटा और बढ़ गया, यह प्रक्रिया 1980 के दशक के दौरान जारी रही और एसएलआर सितंबर 1990 में बैंकिंग प्रणाली की निवल मांग और मीयादी देयताओं के 38.5 प्रतिशत की ऊँचाई पर पहुँच गया।

1980 के दशक के बढ़ते राजकोषीय असंतुलन बाह्य क्षेत्र तक विस्तीर्ण हो गए और मुद्रास्फीतिक दबावों में भी परिलक्षित हुए। कठोर और दुर्बल वित्तीय प्रणाली के साथ, इसने 1980 के दशक की वृद्धि की प्रक्रिया को बड़े पैमाने पर अवहनीय बना दिया। बाह्य असंतुलन बड़े और अवहनीय चालू खाता घाटे में, जो 1990-91 में जीडीपी के 3.2 प्रतिशत पर पहुँच गया था, परिलक्षित हुए। चूँकि वित्त के सामान्य स्रोत के माध्यम से ऐसे बड़े चालू खाता घाटे का वित्तपोषण अधिकाधिक कठिन हो गया, इसका परिणाम 1991 में अप्रत्याशित बाह्य भुगतान संकट के रूप में हुआ जिसमें विदेशी मुद्रा आस्तियां घटकर 1 बिलियन अमरीकी डालर से कम हो गईं। वित्तीयन की समस्याएं इस तथ्य से और बढ़ गईं कि घाटे को 1980 के दशक के अंत तक ऋण प्रवाह के द्वारा व्यापक रूप से वित्तपोषित किया जाता था, जो उस समय की नीतियों को दर्शाता है जब ईक्विटी प्रवाह से ऋण प्रवाह को अधिमान्यता दी जाती थी। वास्तव में, 1990 के दशक के प्रारंभ तक ईक्विटी प्रवाह लगभग नगण्य थे। फिर भी, 1980 के दशक के अंतिम भाग के दौरान ऋण प्रवाहों का अधिकांश भाग बैंकरों की स्वीकृतियों के रूप में अल्पकालिक स्वरूप का था, ऐसे प्रवाहों को भुगतान संतुलनों के संकट के कारण विश्वास की कमी के चलते आसानी से नवीकृत नहीं किया जा सकता था।

बढ़ते राजकोषीय असंतुलन और सुधार

एसएलआर को बढ़ाने से राजकोषीय अपेक्षाओं को पूर्ण रूप से पूरा करने की असमर्थता के चलते, सरकार के वित्तपोषण का भार रिज़र्व बैंक को भी उठाना पड़ता था जिसके कारण मुद्रीकृत घाटा काफी ऊँचे स्तर पर पहुँच जाता था। चूँकि रिज़र्व बैंक का वित्तीयन एक सीमा के बाद मुद्रास्फीतिक हो जाता है, केंद्र सरकार को रिज़र्व बैंक की सहायता में वृद्धि आरक्षित नकदी निधि अपेक्षाओं (सीआरआर) में वृद्धि के साथ की गई। सीआरआर को 1979 में (एनडीटीएल के) 6.0 प्रतिशत से बढ़ाकर 1992 में 15.0 प्रतिशत कर दिया

गया (वास्तव में, यदि 25 प्रतिशत वृद्धिशील आरक्षित नकदी निधि अपेक्षाओं को भी हिसाब में लिया जाए)। तथापि, सीआरआर में वृद्धि का यह क्रम चलनिधि को जब्त करने के लिए पर्याप्त नहीं था और व्यापक मुद्रा वृद्धि अधिक बनी रही और वह मुद्रास्फीति के रूप में फैल गई। एसएलआर और सीआरआर के रूप में सांविधिक पूर्वक्रयों के उच्च क्रम के साथ, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को रियायती ब्याज दर पर ऋण के निदेश का परिणाम गैर रियायती वाणिज्यक क्षेत्र के लिए उधार की दरों के अधिक होने के रूप में हुआ, और इस प्रकार निजी क्षेत्र को कम ऋण उपलब्ध हो सका।

जैसाकि हम जानते हैं, भगुतान संतुलन के संकट के अनुसरण में, समष्टि आर्थिक स्थिरीकरण और संरचनात्मक समायोजन का एक कार्यक्रम शुरू किया गया। राजकोषीय समेकन समष्टि आर्थिक संकट के प्रतिसाद में नीति का एक प्रमुख फलक बना, लेकिन, 1990 के दशक के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र की बचतें कम होना जारी रही और सरकारी प्रशासन की बचतों में तीव्र गिरावट के कारण 1998-2003 की 5 वर्ष की अवधि में वे ऋणात्मक भी हो गईं।

केंद्र और राज्य दोनों स्तरों पर, 1990 के दशक के दौरान राजकोषीय सुधार की प्रगति मिश्रित रही (चार्ट 1 और सारणी 2-3)। जबकि 1996-97 तक केंद्र के राजकोषीय घाटे में कुछ कमी आई, औद्योगिक मंदी और पांचवें वित्त आयोग के अवार्ड के कारण यह प्रकिया अगले कुछ वर्षों में उलट गई। इसके अलावा राजकोषीय समेकन, जिसे राजस्व बढ़ोतरी और वर्तमान व्यय वृद्धि में कटौती के माध्यम से प्राप्त किया जाना था, को ऐसे पूंजी व्यय को 1990-91 में जीडीपी के 5.6 प्रतिशत से घटाकर 1996-97 में 3.1 प्रतिशत करके लाया गया, जिसका आगामी वर्षों में वृद्धि और आधारभूत सुविधाओं में दबाव पर परिणामी प्रभाव हुआ।

सार्वजनिक वित्त में एक प्रमुख रोड़ा केंद्र सरकार के सकल कर-जीडीपी अनुपात के 1991-92 के 10.3 प्रतिशत से कम होकर 1996-97 में 9.4 प्रतिशत तथा 2001-02 में 8.2 प्रतिशत होना था। इस चरण में कर-जीडीपी अनुपात में कमी के लिए, अन्य बातों के साथ-साथ, कर दरों में कटौती को उत्तरदायी माना जा सकता है। कराधान प्रणाली के सुधार के एक भाग के रूप में, अप्रत्यक्ष करों - उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क - में उनके वर्तमान स्तर से काफी अधिक कटौती की गई और इसका अप्रत्यक्ष करों के संग्रहण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। प्रत्यक्ष कर ढाँचे को युक्तिसंगत बनाने से भी इस चरण के दौरान राजस्व संग्रहणों पर कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ा। कम कर दरों के अनुपालन प्रतिसाद में कुछ समय लगा और कम आर्थिक वृद्धि ने भी इस अवधि में प्रत्यक्ष करों में वृद्धि के अभाव में योगदान किया। ऐसा केवल हाल के वर्षों में हुआ है कि हमने राजस्व पर प्रत्यक्ष कर ढांचे के युक्तिसंगतीकरण के लाभकारी प्रभाव को देखा है।

राजकोषीय सुधार की प्रक्रिया पाँचवें वित्त आयोग की सिफारिशों के दबाव के कारण भी जारी नहीं रह सकी। परिणाम के रूप में, वर्ष 2001-02 तक, सभी प्रमुख राजकोषीय मानदंड अर्थात राजस्व घाटा, राजकोषीय घाटा और सार्वजनिक ऋण सुधार प्रक्रिया की शुरुआत के समय से काफी अधिक हो गए। पूंजी परिव्यय राजकोषीय समायोजन का भार वहन करता रहा, जिसमें केंद्र और राज्य दोनों के स्तर पर, जीडीपी के प्रति पूँजी परिव्यय का अनुपात 1997-98 से 2002-03 की अवधि के दौरान सबसे कम पर पहुँच

चार्ट 1 : केन्द्र के घाटा संकेतक

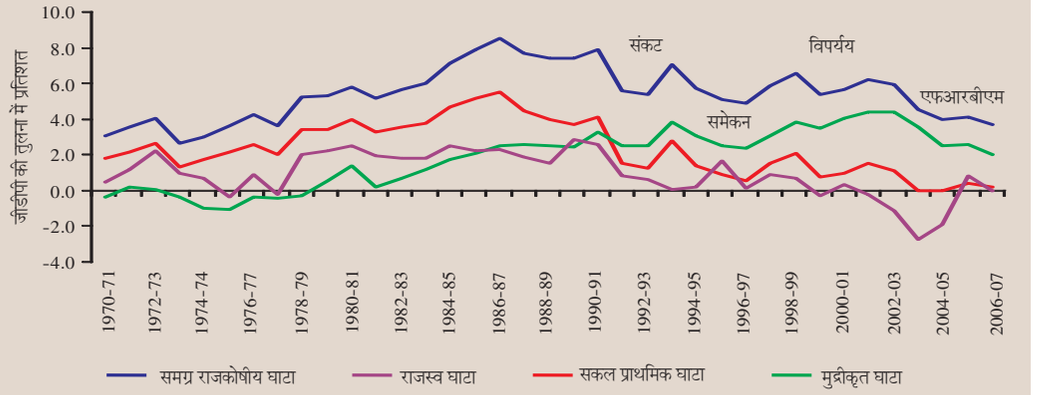

गया। राजकोषीय स्थिति की खराब होती दशाओं को दर्शाते हुए, 1990 के दशक के उत्तरार्ध में सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर में गिरावट हुई, जिसका परिणाम 1998-99 से 2002-03 की अवधि के दौरान अप्रत्याशित अधिव्यय के रूप में हुआ। इसने अर्थव्यवस्था में कुल बचत और निवेश दरों को भी कम किया। घरेलू बचतों के अन्य प्रमुख घटक - घरेलू वित्तीय बचत दर (10 प्रतिशत के लगभग) और निजी कंपनी क्षेत्र की बचत दर (लगभग 4 प्रतिशत) - भी इस अवधि के दौरान रुक गए, जो 1990 के दशक के मध्य के स्तर पर पहुँच गए। परिणामस्वरूप, निवेश की दर भी 1995-96 में लगभग 26 प्रतिशत की ऊँचाई से घटकर 2001-02 में लगभग 23 प्रतिशत हो गई। सहवर्ती रूप में, वृद्धि की प्रक्रिया को धक्का लगा जिसमें वास्तविक जीडीपी वृद्धि 2002-03 में घटकर 3.8 प्रतिशत हो गई।

सारणी 2: केंद्र के प्रमुख राजकोषीय संकेतक

(जीडीपी की तुलना में प्रतिशत)

मद	**1970 का दशक**	**1980 का दशक**	**1990-91**	**1991-92 से 1996-97**	**1997-98 से 2002-03**	**2003-04 से 2006-07**
1	2	3	4	5	6	7
प्रत्यक्ष कर	2.3	2.0	1.9	2.6	3.1	4.6
अप्रत्यक्ष कर	6.4	7.9	8.2	6.9	5.6	5.6
सकल कर	8.7	9.9	10.1	9.5	8.7	10.1
करेतर राजस्व	2.0	2.4	2.1	2.5	2.7	2.4
राजस्व व्यय	8.4	11.5	12.9	12.2	12.9	12.5
ब्याज भुगतान	1.5	2.6	3.8	4.2	4.6	4.0
सब्सिडी	0.8	1.6	2.1	1.3	1.4	1.4
पूंजी परिव्यय	2.1	2.5	2.1	1.5	1.2	1.5
सकल राजकोषीय घाटा	3.8	6.8	7.9	5.6	5.9	4.1
प्राथमिक घाटा	2.3	4.2	4.1	1.4	1.3	0.1
राजस्व घाटा	-0.3	1.7	3.3	2.8	3.9	2.7
केंद्र को दिए गए निवल भारिबैं. ऋण	1.0	2.1	2.6	0.6	0.0	-1.0

स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकी हैंडबुक, भारिबैं, 2006-07.

सारणी 3 : राज्य सरकारों के प्रमुख घाटा संकेतक

(जीडीपी की तुलना में प्रतिशत)

मद	1970 का दशक	1980 का दशक	1990-91	1991-92 से 1996-97	1997-98 से 2002-03	2003-04 से 2006-07
1	2	3	4	5	6	7
राज्यों के अपने कर	3.9	5.1	5.3	5.4	5.4	6.1
केंद्रीय करों में अंश	1.9	2.5	2.5	2.6	2.4	2.6
करेतर राजस्व	1.7	1.9	1.6	1.9	1.5	1.4
केंद्र से अनुदान	1.6	2.0	2.2	2.1	1.7	2.1
केंद्र से ऋण	2.2	2.3	2.5	1.8	1.4	0.6
राजस्व व्यय	8.6	11.4	12.6	12.6	13.2	13.1
ब्याज भुगतान	0.8	1.1	1.5	1.8	2.4	2.6
पूंजी परिव्यय	1.6	1.9	1.6	1.5	1.4	2.2
सकल राजकोषीय घाटा	2.0	2.8	3.3	2.7	4.1	3.3
प्राथमिक घाटा	1.2	1.7	1.8	0.9	1.7	0.7
राजस्व घाटा	-0.6	-0.1	0.9	0.7	2.3	0.9

स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकी हैंडबुक, भारिबैं, 2006-07.

सार्वजनिक क्षेत्र की बचतें

1997-98 से 2002-03 की अवधि के दौरान राजकोषीय घाटे में कमी और बढ़ते सार्वजनिक ऋण तथा सार्वजनिक निवेश और वृद्धि पर इसके प्रतिकूल प्रभाव को देखते हुए, दीर्घकालिक आधार पर सार्वजनिक वित्त की स्थिति में सुधार पर पुनः जोर दिया गया। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए राजकोषीय समेकन को केंद्र स्तर पर राजकोषीय जबावदेही और बजट प्रबंधन अधिनियम, 2003 तथा राज्य स्तर पर इसी प्रकार के राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान के द्वारा दिशानिर्देश दिया जा रहा है। आंशिक रूप से केंद्र और राज्यों में नियम आधारित राजकोषीय नीतियों के कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप, 2002-03 से केंद्र और राज्य दोनों के स्तर पर राजकोषीय समेकन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण उपलब्धियां दिखी हैं।

हाल के वर्षों में, भारत में जारी राजकोषीय समेकन प्रक्रिया की दीर्घकालिकता में योगदान करने वाला प्रमुख कारक राजस्व में अधिकता रहा है, जिसके साथ परिणाम पर ध्यान केन्द्रित करने के साथ व्यय में कुछ पुनर्प्राथमिकीकरण किया गया है जो अधिकांश अन्य देशों में व्यय घटाने की रणनीति और 1990 के दशक में भारत के अनुभव से भिन्न है। राजस्व बढ़ाने वाली रणनीति में शामिल किया गया है - कर दरों को कम करना और करों, विशेष रूप से सेवा कर के दायरे में विस्तार के माध्यम से कराधार को बढ़ाना, छूटों को हटाना और कर प्रशासन में कुछ सुधार, जिसमें बकाया वसूलियों पर मुख्य ध्यान दिया गया हो। इन उपायों को परिलक्षित करते हुए, केंद्र का कर-जीडीपी अनुपात 2001-02 के 8.2 प्रतिशत से लगातार बढ़कर 2006-07 (सं.अ.) में 11.3 प्रतिशत और 2007-08 में 11.8 प्रतिशत (ब.अ.) हो गया है। कर राजस्व में संपूर्ण वृद्धि मुख्य रूप से प्रत्यक्ष करों में अधिकता के कारण थी।

व्यय के मामले में, जबकि केंद्र का कुल व्यय 2003-04 में जीडीपी के 17.0 प्रतिशत की हाल की ऊँचाई से घटकर 2006-07 (सं.अ.) में 14.1

प्रतिशत हो गया, पूँजी परिव्यय जीडीपी के 1.2 प्रतिशत से बढ़कर 1.6 प्रतिशत हो गया। प्रमुख घाटा संकेतकों में घटबढ़ राजकोषीय समेकन में हाल में हुई प्रगति को दर्शाती है। केंद्र और राज्यों का समेकित राजकोषीय घाटा 2001-02 में जीडीपी के 9.9 प्रतिशत से घटकर 2006-07 में 6.4 प्रतिशत हो गया, जिसका कारण राजस्व घाटे का जीडीपी के 7.0 प्रतिशत से घटकर 2.1 प्रतिशत रह जाना था। गुणात्मक सुधार के अलावा, जारी राजकोषीय समेकन की प्रमुख विशेषता की गई गुणात्मक प्रगति है जैसा कि सकल राजकोषीय घाटे की तुलना में राजस्व घाटे के अनुपात में हुई कमी में परिलक्षित होता है। परिणाम के रूप में, सरकारी प्रशासन का अधिव्यय 2001-02 में जीडीपी के (-)6.0 प्रतिशत से घटकर 2006-07 में (-)1.3 प्रतिशत हो गया। 2006-07 में 0.6 प्रतिशत की विभागीय उद्यमों की बचतें 2001-02 की तुलना में अपरिवर्तित रहीं।

सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों के प्रमुख घटक अर्थात गैर-विभागीय उपक्रमों की बचतों में 1970 के दशक से लगातार सुधार दिखा है और यह प्रक्रिया सुधारों की अवधि में जारी है (सारणी 4)। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के वाणिज्यिक कार्य-कलाप में 1990 के प्रारंभिक दशक से निरंतर और सुस्थिर सुधार दिखा है। परिणामस्वरूप, 2003-04 से आगे कुल सार्वजनिक बचत पुनः धनात्मक हो गई। समग्र सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर 2001-02 में जीडीपी के (-)2.0 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में जीडीपी का 3.2 प्रतिशत हो गई। पिछले कुछ वर्षों में बढ़िया सुधार के बावजूद, यह ध्यान देने की बात है कि 2006-07 के दौरान 3.2 प्रतिशत की सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर 1976-77 की पाँच प्रतिशत से अधिक की ऊँचाई की तुलना में अब भी कम है। फिर भी, सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों में जीडीपी के 5.2 प्रतिशत अंक का सुधार - 2001-02 में जीडीपी के 2.0 प्रतिशत ऋणात्मक से 2006-07 में जीडीपी के 3.2 प्रतिशत धनात्मक - एक ऐसा प्रमुख कारक रहा है जिसने इसी अवधि में घरेलू बचतों को 23.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 34.8 प्रतिशत कर दिया है। सार्वजनिक क्षेत्र की निवेश दर 2001-02 में जीडीपी के 6.9 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 7.8 प्रतिशत हो गई, लेकिन यह स्तर अभी भी 1970, 1980 और 1990 के दशकों की तुलना में काफी कम है। इस वृद्धि के बावजूद, इस क्षेत्र

सारणी 4 : सार्वजनिक क्षेत्र की बचत और निवेश दरें

(जीडीपी की तुलना में प्रतिशत)

मद	1970 का दशक	1980 का दशक	1990-91	1991-92 से 1996-97	1997-98 से 2002-03	2003-04 से 2006-07
1	2	3	4	5	6	7
बचतें						
सरकारी प्रशासन	2.5	0.8	-1.8	-1.6	-4.8	-2.4
विभागीय उद्यम	0.6	0.4	0.6	0.8	0.7	0.5
गैर-विभागीय उद्यम	1.2	2.5	2.9	3.0	3.4	4.1
कुल सार्वजनिक क्षेत्र बचत दर	4.2	3.7	1.8	2.2	-0.7	2.3
सार्वजनिक क्षेत्र निवेश दर	8.6	10.6	10.0	8.7	6.9	7.1
बचत-निवेश अंतर	-4.4	-6.9	-8.2	-6.5	-7.5	-4.9

का बचत-निवेश अंतर 2001-2007 के दौरान जीडीपी के 8.9 प्रतिशत से घटकर 4.5 प्रतिशत हो गया है, जो सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों (जो (-)2.0 प्रतिशत से बढ़कर 3.2 प्रतिशत हो गया) में सुधार को दर्शाता है, ऐसा राजकोषीय नियमों के कार्यान्वयन के कारण हो सका।

निजी कंपनी क्षेत्र का कार्य-निष्पादन

केंद्र के बजटीय अंतरों को पूरा करने तथा समग्र सार्वजनिक क्षेत्र के वित्तीयन के लिए घटी आवश्यकताओं ने निजी क्षेत्र के लिए संसाधनों की उपलब्धता काफी बढ़ा दी है। इसके अलावा, कंपनी क्षेत्र ने, प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग के माध्यम से अपनी उत्पादकता और कार्यक्षमता को बढ़ा करके, बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा के प्रति रेसपांड किया है। आर्थिक सुधार प्रक्रिया ने और अधिक प्रभावी उद्यमशील कार्य के लिए अधिक सहायक नीति वातावरण बनाने में बहुत अधिक सहायता दी है। कंपनी कर दर को 1992-93 में 45 प्रतिशत से निरंतर घटाकर 2005-06 में 30 प्रतिशत कर दिया गया है और उसके बाद स्थिर रखा गया है। गैर कृषि माल पर सीमा शुल्क की उच्च दर को 1991-92 के 150 प्रतिशत से धीरे-धीरे घटाकर 2007-08 में 10 प्रतिशत कर दिया गया। मौद्रिक नीति से मुद्रास्फीति में निरंतर कमी आई है जिससे सांकेतिक ब्याज दरों में कमी हुई है। फर्मों के वित्तीय पुनर्संरचन से कंपनी क्षेत्र के समग्र ऋण ईक्विटी अनुपात में कमी आई है। इस प्रकार ब्याज चुकाने की लागत में हुई काफी कमी ने कंपनी क्षेत्र की प्रतिस्पर्धा और लाभदायकता को बढ़ाया है।

कर के पश्चात लाभ ने 2006-07 को समाप्त 4 वर्ष की अवधि के दौरान प्रति वर्ष लगभग 47 प्रतिशत की वार्षिक औसत वृद्धि दर्ज की है (सारणी 5)। लाभ मार्जिन में काफी वृद्धि हुई है, जबकि ब्याज का भार काफी घटा है। वास्तव में, बिक्री राजस्व की तुलना में ब्याज व्यय का अनुपात 1990 के दशक के लगभग 6 प्रतिशत से गिरकर अब लगभग 2 प्रतिशत हो गया है, इस प्रकार इसने बढ़ी हुई लाभ वृद्धि में बहुत अधिक अंशदान किया। निवल मालियत की तुलना में कर के पश्चात लाभ अनुपात, 1995-96 के 14.4 प्रतिशत से गिरकर 2001-02 में 5.1 प्रतिशत होने के बाद, 2005-06 में बढ़कर 16.6 प्रतिशत हो गया (सारणी 6)। हाल की अवधि में कंपनी क्षेत्र के कार्य निष्पादन की दूसरी उल्लेखनीय विशेषता धारित लाभ में प्रगामी वृद्धि है, जो कर पश्चात लाभ के हिस्से के रूप में, 2001-02 के 30.9 प्रतिशत से बढ़कर 2005-06 में 73.6 प्रतिशत हो गई। बढ़ी हुई लाभदायकता, जो सुधरी उत्पादकता और कर दरों की कमी को दर्शाती है, कंपनियों को अपने तुलन पत्रों को डिलीवरेज करने योग्य बनाया। यह ऋण-इक्विटी अनुपात में हुई तीव्र गिरावट में परिलक्षित हुआ। बेहतर कंपनी वित्तीय कार्य निष्पादन से निजी कंपनी क्षेत्र की बचत दर दुगुनी से ज्यादा (2001-02 के 3.4 प्रतिशत से 2006-07 में 7.8 प्रतिशत) हो गई, जिसने समग्र बचत दर को तीव्र करने में भी योगदान दिया है।

दीर्घकालिक दृष्टिकोण से, यह देखना रुचिकर है कि निजी कंपनी क्षेत्र की बचत दर 1950 के दशक के एक प्रतिशत, 1980 के दशक के 1.7 प्रतिशत और 1990 के दशक के 3.8 प्रतिशत से बढ़कर अब लगभग 8 प्रतिशत हो गई है। बैंकिंग क्षेत्र से संसाधनों की उपलब्धता के साथ उच्च धारित लाभों को सरकार की कम वित्तीयन आवश्यकता से मदद मिली और देशी एवं अंतर्राष्ट्रीय पूँजी बाजार तक बढ़ी हुई पहुँच

सारणी 5 : कंपनी वित्तीय कार्य-निष्पादन

मद	1990/91	1991/92 1996/97	1997/98 2002/03	2003/04 2006-07	2006/07 अप्रैल-सितं.	2007-08 अप्रैल-सितं.
1	2	3	4	5	6	7
वृद्धि दरें (प्रतिशत)						
बिक्री	15.8	16.9	7.0	20.7	27.4	17.4
व्यय	15.1	16.6	7.4	19.7	25.6	16.9
मूल्यह्रास प्रावधान	10.1	16.6	12.9	10.2	16.1	15.1
सकल लाभ	27.8	18.2	3.6	30.9	39.8	28.1
ब्याज भुगतान	16.2	18.7	3.8	-0.6	20.8	10.1
कर पश्चात् लाभ	53.3	21.1	7.8	47.3	41.6	31.1
चुनिंदा अनुपात (प्रतिशत)						
बिक्री के प्रति सकल लाभ	11.2	12.4	10.6	12.7	15.6	16.9
बिक्री के प्रति कर पश्चात लाभ	4.0	5.5	3.6	8.0	10.6	11.7
ब्याज व्याप्ति अनुपात (गुना)	1.9	2.1	1.8	5.2	7.1	8.4
बिक्री के प्रति ब्याज	5.8	6.0	6.0	2.6	2.2	2.0
सकल लाभ के प्रति ब्याज	51.6	48.5	56.6	21.0	14.1	11.9
कुल व्यय के प्रति ब्याज	5.8	6.0	6.0	2.8	2.5	2.3
इक्विटी के प्रति ऋण	99.0	75.1	67.0	51.4	NA	NA
निधियों के कुल स्रोतों के प्रति						
निधियों के आंतरिक स्रोत	35.8	30.6	50.4	50.9	NA	NA
कुल उधारों के प्रति बैंक उधार	35.6	31.6	35.5	52.6	NA	NA

टिप्पणी : 1. 2005-06 तक के आंकड़े लेखा-परीक्षित तुलन-पत्र पर आधारित हैं, जबकि 2006-07 और 2007-08 के आंकड़े चुनिंदा गैर सरकारी गैर वित्तीय सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियों के संक्षिप्त वित्तीय परिणामों पर आधारित हैं।

2. वृद्धि दरें सामान्य प्रकार की कंपनियों के लिए पूर्व वर्ष की तदनुरूप अवधि की तुलना में संदर्भाधीन अवधि के स्तर में प्रतिशत परिवर्तन हैं।

स्रोत : 2007-08 की पहली छमाही के दौरान कंपनी वित्तों और निजी कंपनी कारोबार क्षेत्र के कार्यनिष्पादन पर भारिबैं. अध्ययन (भारिबैं. बुलेटिन, जनवरी 2008)।

से कंपनी क्षेत्र की निवेश दर 2001-02 में जीडीपी के 5.4 प्रतिशत से तेजी से बढ़कर 2006-07 में 14.5 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार, बढ़ी हुई बचत दर के बावजूद कंपनी क्षेत्र का बचत-निवेश अंतर 2001-02 में जीडीपी के 2.1 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 6.8 प्रतिशत हो गया।

घरेलू बचत

स्वतंत्रता से भारतीय समष्टि आर्थिक गाथा की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि दशकों से घरेलू बचत में लगातार वृद्धि हो रही है (सारणी 7)। जैसी कि आशा है, इस वृद्धि की विशेषता जीडीपी के अनुपात में वित्तीय बचतों में लगातार बढ़ोत्तरी रही है। वित्तीय क्षेत्र, विशेष रूप से बैंक शाखाओं के विस्तार, डाक घर बचतों आदि ने घरेलू वित्तीय बचतों को एकत्र करने में मदद की। उनकी वित्तीय देयताएं तदनुसार नहीं बढ़ीं क्योंकि घरेलू ऋण के लिए बहुत कम वित्तीय उत्पाद उपलब्ध थे। निजी क्षेत्र के नए बैंकों के आने से हाल के वर्षों में इस स्थिति में बदलाव आया है, इन बैंकों ने बड़ी मात्रा में आवास और उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं के लिए खुदरा ऋण की शुरुआत की है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने ऐसा ही अनुसरण किया है।

इसलिए जबकि घरेलू क्षेत्र की सकल वित्तीय बचतें हाल के कुछ वर्षों में लगातार ऊपर की ओर बढ़ रही हैं, घरेलू वित्तीय क्षेत्र की देयताएं भी, अलबत्ता निम्न आधार से, तेजी से बढ़ रही है। उदाहरण के रूप में, सकल वित्तीय बचतें 2004-05 में जीडीपी के 13.8

सारणी 6 : कंपनी के कार्य निष्पादन पर राजकोषीय नीति का प्रभाव

प्रतिशत

वर्ष	करोत्तर लाभ/ निवल मालियत	कर प्रावधान/ कर पूर्व लाभ	धारित लाभ/ करोत्तर लाभ	लाभांश निवल मालियत
1	2	3	4	5
1980-81	14.2	43.8	61.8	5.4
1990-91	13.5	32.4	62.8	5.0
1991-92	12.0	36.5	62.2	4.5
1992-93	8.7	33.3	53.9	4.0
1993-94	12.0	23.7	67.6	3.9
1994-95	14.0	20.2	72.2	3.9
1995-96	14.4	19.7	73.6	3.8
1996-97	9.5	27.8	64.0	3.4
1997-98	7.6	26.3	63.0	2.8
1998-99	5.6	31.4	52.3	2.7
1999-00	6.3	33.2	47.6	3.3
2000-01	6.5	32.3	48.8	3.3
2001-02	5.1	36.7	30.9	3.5
2002-03	8.7	31.3	56.3	3.8
2003-04	12.3	28.7	64.7	4.6
2004-05	15.9	25.9	73.1	4.5
2005-06	16.6	25.4	73.6	4.6

स्रोत : कंपनी वित्तों का अध्ययन; भारतीय रिज़र्व बैंक।

प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 18.3 प्रतिशत हो गईं, जबकि उनकी वित्तीय देयताएं 2004-05 के दौरान जीडीपी के 3.8 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 के दौरान 6.8 प्रतिशत हो गईं। निरंतर वित्तीय गहनता घरेलू क्षेत्र के लिए बैंक ऋण की व्यापक पहुँच को आसान बना रही है। परिणाम के रूप में, घरेलू वित्तीय बचत (निवल) वर्तमान दशक में केवल मामूली रूप से बढ़ी - 2001-2007 के दौरान जीडीपी के 10.9 प्रतिशत से 11.3 प्रतिशत । दूसरी तरफ, आवास वित्त की बढ़ी हुई उपलब्धता के कारण, घरेलू क्षेत्र की निवेश दर (भौतिक बचत) 1997-2003 के 10.5 प्रतिशत से बढ़कर 2003-07 में 12.7 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार, संयुक्त रूप से सार्वजनिक और निजी कंपनी क्षेत्र के बचत-निवेश अंतर के विस्तार को आंशिक रूप से घरेलू वित्तीय बचतों और आंशिक रूप से विदेशी बचतों से वित्तपोषण मिला। ऐसा 2003-04 में जीडीपी के 0.4 प्रतिशत से 2006-07 में जीडीपी के 1.1 प्रतिशत के चालू खाता घाटे के विस्तार में परिलक्षित हुआ। कंपनी क्षेत्र के लिए विदेशों से वित्त के प्रमुख स्रोतों के बीच, बाह्य वाणिज्यिक उधार 2001-02 में जीडीपी के (-) 0.3 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में जीडीपी के लगभग 1.7 प्रतिशत हो गए।

सारणी 7 : निजी क्षेत्र की बचत और निवेश दरें

(जीडीपी की तुलना में प्रतिशत)

मद	1950 का दशक	1960 का दशक	1970 का दशक	1980 का दशक	1990-91	1991-92 से 1996-97	1997-98 से 2002-03	2003-04 से 2006-07
1	2	3	4	5	6	7	8	9
घरेलू बचतें	6.6	7.6	11.4	13.5	18.4	16.8	20.8	23.8
वित्तीय बचतें	1.9	2.7	4.5	6.7	8.7	10.0	10.3	11.1
भौतिक बचतें	4.7	4.9	6.9	6.8	9.7	6.8	10.5	12.7
निजी कंपनी बचतें	1.0	1.5	1.5	1.7	2.7	3.7	4.0	6.6
निजी कंपनी निवेश	1.9	2.9	2.6	4.5	4.5	7.7	6.6	11.2
ज्ञापन :								
बचत-निवेश अंतर								
घरेलू क्षेत्र	1.9	2.7	4.5	6.7	8.7	10.0	10.3	11.1
निजी कंपनी क्षेत्र	-0.9	-1.5	-1.0	-2.8	-1.8	-4.0	-2.6	-4.7
सार्वजनिक क्षेत्र	-2.6	-4.1	-4.4	-6.9	-8.2	-6.5	-7.5	-4.9

क्षेत्रीय स्तर पर बेहतर वित्त को परिलक्षित करते हुए, सकल घरेलू बचत दर, 1990 के दशक के दौरान जीडीपी के लगभग 21-24 प्रतिशत की सीमा में रहने के पश्चात, निरंतर बढ़कर 2006-07 में 34.8 प्रतिशत हो गई। निवेश दर भी 2001-02 में जीडीपी के 22.9 प्रतिशत से काफी बढ़कर 2006-07 में 35.9 प्रतिशत हो गई। वृद्धिशील पूँजी उत्पाद अनुपात के 4 के लगभग रहने के साथ, वास्तविक जीडीपी वृद्धि 2002-03 के 3.8 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 9.6 प्रतिशत हो गई।

बचतों और निवेश का आकलन

वृद्धि प्रक्रिया में निवेश के द्वारा अदा की गई प्रमुख भूमिका को देखते हुए, घरेलू बचतों और निवेश का विश्वसनीय और समय पर आकलन महत्वपूर्ण है। भारत में बचतों और निवेश के आकलन की कार्यप्रणाली अंतरराष्ट्रीय दिशानिर्देशों और भारत में घरेलू सांख्यिकी प्रणाली में सुधार के अनुरूप वर्षों में विकसित हुई है; फिर भी, डाटा बेस, आकलन की प्रणाली, निर्भरता और अर्थप्रतिपादन महत्ता के संबंध में भारतीय अर्थव्यवस्था में बचतों और निवेश के उपलब्ध आकलन की अत्यावश्यक रूप से समीक्षा किए जाने की जरूरत है। राष्ट्रीय खाते में इस क्षेत्र के विषम और अवशिष्ट स्वरूप को देखते हुए घरेलू क्षेत्र की बचतों का समेकन एक चुनौती प्रस्तुत कर रहा है। घरेलू, वित्तीय बचतों के संबंध में, यह मूल्यांकन किए जाने की आवश्यकता है कि क्या वित्तीय गहनता का वर्तमान स्तर विभिन्न वित्तीय लिखतों के आंकड़ों में सही-सही परिलक्षित हो रहा है। इस संबंध में, निधि प्रवाह खातों का समय पर संकलन घरेलू वित्तीय बचतों के सही आकलन में बहुत मदद करेगा। समन्वित आय और व्यय सर्वेक्षण के माध्यम से घरेलू बचतों के सीधे-सीधे आकलन करने की संभावना पर विचार किए जाने की आवश्यकता है। निजी कंपनी क्षेत्र के संबंध में, यह जाँच किए जाने की आवश्यकता है कि उनके बचत आकलनों को बाजार भाव पर अथवा वर्तमान मूल्यबही प्रणाली पर किया जाना उचित होगा। सार्वजनिक क्षेत्र के संबंध में, बचत और निवेश आकलनों को, एक तरफ महापालिकाओं, नगर निगमों, ग्राम पंचायतों और अन्य स्थानीय सरकारों तथा दूसरी तरफ, सार्वजनिक निवेश में बढ़ी हुई निजी सहभागिता को शामिल करके और सुदृढ़ बनाया जा सकता है। इन मुद्दों को स्वीकार करते हुए, सरकार ने हाल में बचत और निवेश पर आकलन के लिए एक उच्च स्तरीय समिति (अध्यक्ष : डॉ. सी. रंगराजन) नियुक्त की है। दिसंबर 2007 में बनाई गई समिति से आशा है कि वह भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए बचत और निवेश के आकलनों की समीक्षा करने के लिए वर्तमान कार्यप्रणाली की आलोचनात्मक रूप से समीक्षा करेगी।

संसाधनों के प्रयोग में कार्यकुशलता

1950 के दशक से न केवल भारत की निवेश दर में लगातार ऊर्ध्वमुखी प्रवृत्ति रही है, ऐसे साक्ष्य है कि पूँजी को उत्पादक रूप से नियोजित किया गया है। 1970 के दशक को छोड़कर, वृद्धिशील पूँजी उत्पाद अनुपात लगभग 4 के आस-पास रहा है। सुधार के पश्चात की अवधि में घरेलू उत्पादकता में सुधार के कुछ चिह्न दिखे हैं। विभिन्न देशों से तुलना करने पर पता चलता है कि वृद्धिशील पूँजी उत्पाद अनुपात भारत में सबसे कम रहा है। यह विशेष रूप से 1980 के दशक से आगे की अवधि के लिए सत्य है (सारणी 8)। प्रतिस्पर्धा बढ़ाने के उद्देश्य से बनाए

सारणी 8 : वृद्धि, निवेश और आइसीओआर - चुनिंदा देश

देश	1960 का दशक	1970 का दशक	1980 का दशक	1990 का दशक	2000-2006
1	2	3	4	5	6
वास्तविक जीडीपी वृद्धि (प्रतिशत)					
ब्राजील	5.9	8.5	3.0	1.7	3.1
चीन	3.0	7.4	9.8	10.0	9.5
भारत	**4.0**	**2.9**	**5.6**	**5.7**	**7.0**
इंडोनेशिया	3.7	7.8	6.4	4.8	4.9
कोरिया	8.3	8.3	7.7	6.3	5.2
मैक्सिको	6.8	6.4	2.3	3.4	2.9
फिलीपीन्स	5.1	5.8	2.0	2.8	4.8
दक्षिण अफ्रीका	6.1	3.3	2.2	1.4	4.1
थाइलैन्ड	7.8	7.5	7.3	5.3	5.0
वास्तविक निवेश दर (जीडीपी का प्रतिशत)					
ब्राजील	15.3	18.1	16.4	16.9	15.8
चीन	23.7	35.9	37.4	40.1	41.4
भारत	**16.9**	**19.4**	**20.2**	**23.3**	**28.1**
इंडोनेशिया	8.9	17.9	29.6	33.1	22.7
कोरिया	12.8	21.0	27.4	35.6	29.4
मैक्सिको	25.9	26.2	20.1	20.4	22.1
फिलीपीन्स	19.9	23.3	21.6	22.9	20.7
दक्षिण अफ्रीका	16.0	20.0	17.8	14.9	17.2
थाइलैन्ड	26.8	31.5	30.2	36.4	22.6
आइसीओआर					
ब्राजील	2.6	2.1	5.5	9.9	5.1
चीन	7.9	4.8	3.8	4.0	4.3
भारत	**4.3**	**6.6**	**3.6**	**4.1**	**4.0**
इंडोनेशिया	2.4	2.3	4.6	6.9	4.7
कोरिया	1.5	2.5	3.6	5.7	5.7
मैक्सिको	3.8	4.1	8.8	6.0	7.6
फिलीपीन्स	3.9	4.0	10.7	8.2	4.3
दक्षिण अफ्रीका	2.6	6.2	8.0	10.7	4.2
थाइलैन्ड	3.4	4.2	4.1	6.9	4.5

स्रोत : वर्ल्ड डेवलपमेंट इंडीकेटरर्स, विश्व बैंक।

गए विभिन्न सुधार उपायों का भारतीय अर्थव्यवस्था की उत्पादकता पर वांछित प्रभाव पड़ा है।

जैसाकि ऊपर कहा गया है, 2002-03 से सार्वजनिक वित्त और सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों में सुधार ने घरेलू बचतों तथा निवेश दरों को बढ़ाने में उल्लेखनीय अंशदान किया है। बदले में, उच्च बचतों और निवेश दरों के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था में अधिक वृद्धि हुई है। यह स्पष्ट है कि भारतीय संदर्भ में राजकोषीय समेकन ने वृद्धि को आगे बढ़ाया है। परंपरागत विचार है कि राजकोषीय विवेक घरेलू मांग और वृद्धि को कम कर सकता है। तथापि, भारतीय अनुभव बतलाते हैं कि राजकोषीय विवेक से अधिक घरेलू बचतें हो सकती हैं और इससे घरेलू निवेश के लिए संसाधन बढ़ सकते हैं। तदनुसार, विगत कुछ वर्षों के राजकोषीय समेकन की प्रक्रिया को अपनाना अत्यंत आवश्यक है जिससे वर्तमान बचतों/निवेश दरों तथा निरंतर वृद्धि की गति को बनाए रखा जा सके।

जबकि राजकोषीय घाटे को रोकना आवश्यक है, राजकोषीय समायोजन की गुणवत्ता भी महत्वपूर्ण है। सब्सिडी के मुकाबले सार्वजनिक निवेश के लिए सार्वजनिक व्ययों के पुनर्प्राथमिकीकरण की प्रक्रिया अपनाना आवश्यक है। जबकि सब्सिडी अल्पकालिक लाभ प्रदान कर सकती है, वह दीर्घकालिक निवेशों को रोक सकती है और संसाधनों के प्रयोग में अकुशलता को बढ़ावा दे सकती है। ये मुद्दे कृषि विकास के संदर्भ में महत्वपूर्ण हैं, विशेष रूप से बड़ी फसलों के घरेलू मांगपूर्ति के अंतर और बढ़े हुए अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के संदर्भ में। कृषि में सार्वजनिक निवेश 1976-80 के दौरान कृषि जीडीपी के 3.4 प्रतिशत से घटकर 2005-06 के दौरान 2.6 प्रतिशत हो गया, जबकि कृषि के प्रति बजट सब्सिडी तीन प्रतिशत (1976-80) से बढ़कर कृषि जीडीपी (2001-03) का सात प्रतिशत हो गई। इसलिए, राजकोषीय समेकन को अपनाते हुए, सार्वजनिक निवेश को बढ़ाने और राजकोषीय सब्सिडी को रोकने पर अधिक जोर देने से , अधिक लाभ मिलने की संभावना हो गई है। इससे न केवल चालू वृद्धि को गति मिलेगी बल्कि खाद्य सुरक्षा और घरेलू मूल्य स्थिरता भी आएगी।

वित्तीय क्षेत्र के सुधार

पिछले कुछ वर्षों से देश में निवेश गतिविधि का उच्च क्रम 2003-04 से बैंकिंग क्षेत्र से ऋण की सुदृढ़ मांग के रूप में दिखा। इस संदर्भ में, वित्तीय क्षेत्र के सुधारों ने प्रमुख भूमिका निभाई है (मोहन, 2006 क; 2007 ख)। 1990 के दशक के प्रारंभ में शुरू किए गए वित्तीय क्षेत्र के सुधारों, जिसमें सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामी की शुरुआत, ब्याज दरों का अविनिमयन और सरकार द्वारा संस्थागत संसाधनों के सांविधिक पूर्वक्रय में कमी शामिल है, को 1997-98 से राजकोषीय घाटे के स्वतः मुद्रीकरण की प्रणाली को समाप्त करके आगे बढ़ाया गया। आय बाजार-निर्धारित करके, सरकारी प्रतिभूति बाजार की गतिविधियों के साथ इन उपायों ने वित्तीय बाजार सुधारों का आधार तैयार किया। ब्याज दरों को व्यापक रूप से बाजार निर्धारित बनाने के अलावा, सुधारों में बाजार निर्धारित विनिमय दर (यद्यपि भारतीय रिज़र्व बैंक विदेशी मुद्रा में हस्तक्षेप करता है), चालू खाता परिवर्तनीयता, वास्तविक पूँजी खाता उदारीकरण और ईक्विटी बाजार का अविनिमयन शामिल है। मूल्य संकेतों के माध्यम से लागत कार्यक्षमता में सुधार के लिए किए गए वित्तीय क्षेत्र के सुधारों ने, बेहतर राजकोषीय मौद्रिक समन्वयन के माध्यम से, अप्रत्यक्ष बाजार आधारित लिखतों के द्वारा मौद्रिक नीति के संचालन को आसान बनाया। इस प्रक्रिया को एफआरबीएम अधिनियम, 2003 के कार्यान्वयन द्वारा और सुदृढ़ बनाया गया, जिसके अंतर्गत केंद्र सरकार ने राजस्व घाटे को समाप्त करने और अपने राजकोषीय घाटे को 2008-09 तक कम करके जीडीपी का 3 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा है तथा अप्रैल 2006 से रिज़र्व बैंक को प्राथमिक सरकारी प्रतिभूति बाजार में भाग लेने से मना किया गया। कुल मिलाकर, इन सुधारों ने ब्याज दरों और विनिमय दर दोनों में बेहतर मूल्य खोज को बढ़ावा दिया है, इस प्रकार वित्तीय मध्यस्थता में समग्र कार्यक्षमता लाने में अंशदान दिया है। संसाधनों के उपयोग में हाल के वर्षों में वित्तीय गहनता में वृद्धि और समग्र कार्यक्षमता की प्राप्ति से पता चलता है कि भारत में वित्तीय मध्यस्थता सापेक्षिक रूप से कार्यक्षम रही है।

2003-04 से सार्वजनिक निवेश बढ़ना शुरू हो गया है, जिसने 1980 के दशक के मध्य में शुरू हुए गिरते रुझान की लंबी अवधि को पलट दिया है। 2003-04 से, निजी निवेश में भी व्यापक वृद्धि दिखी है (चार्ट 2)। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अधिक सार्वजनिक निवेश निजी निवेश के साथ चल सकता है जिससे एक अच्छी स्थिति बनेगी। इसको देखते हुए यह आवश्यक है कि वर्तमान राजकोषीय समेकन प्रक्रिया को जारी रखने की आवश्यकता है, जिससे अधिक सार्वजनिक निवेश संभव हो सके तथा जिससे और अधिक निजी निवेश आकर्षित हो सकेगा।

वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के रूप में और वित्तीय कड़ाई को कम करने के लिए, 1997 में एसएलआर की अपेक्षा को घटाकर तत्कालीन सांविधिक न्यूनतम अर्थात 25 प्रतिशत कर दिया गया। केंद्र सरकार के बाजार उधारों के लिए नीलामी प्रणाली की मौजूदगी में, अपेक्षित एसएलआर में कटौती से, बाजार से संबंधित ब्याज दरों पर उधार के माध्यम से राजकोषीय घाटे के बढ़ते हिस्से को पूरा किए जाने की आशा है। यद्यपि अपेक्षित एसएलआर में परिकल्पित कमी से बैंकों के निजी क्षेत्र के प्रति ऋणों के बढ़ने की आशा है, बैंकों ने निर्धारित सांविधिक न्यूनतम की अपेक्षाओं से अधिक सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करना जारी रखा। वाणिज्य बैंकों की एसएलआर धारिताएं अप्रैल 2004 तक 42.7 प्रतिशत के लगभग पहुँच गई। इस अवधि के दौरान ऋण प्रवाह में, सापेक्षिक रूप से पश्चाद् प्रभाव से, कम वृद्धि देखी गई जिसके लिए आंशिक रूप से वास्तविक ब्याज दरों में वृद्धि और कारोबार चक्र में गिरावट के कारण मांग में कमी को उत्तरदायी माना जा सकता है। विभिन्न कारकों को देखते हुए, बैंकिंग प्रणाली द्वारा ऋण के विस्तार को संभवतः जोखिमपूर्ण माना गया; जोखिम समायोजित प्रतिफलों ने बैंक ऋण के सम्मुख सरकारी प्रतिभूतियों में अत्यधिक निवेश को बढ़ावा दिया। महत्वपूर्ण कारोबार पुनर्संरचना और कंपनी डिलीवरेजिंग ने भी कुछ हद तक बैंक ऋण की आवश्यकता को कम किया है।

2003-04 से ऋण वृद्धि में काफी बढ़ोत्तरी हुई, जिसके लिए आंशिक रूप से वास्तविक जीडीपी वृद्धि में तेजी, ब्याज दरों में कमी, कृषि जैसे क्षेत्रों के प्रति ऋण के प्रवाह को सुधारने हेतु गहन नीतिगत पहलों

चार्ट 1 : केन्द्र के घाटा संकेतक

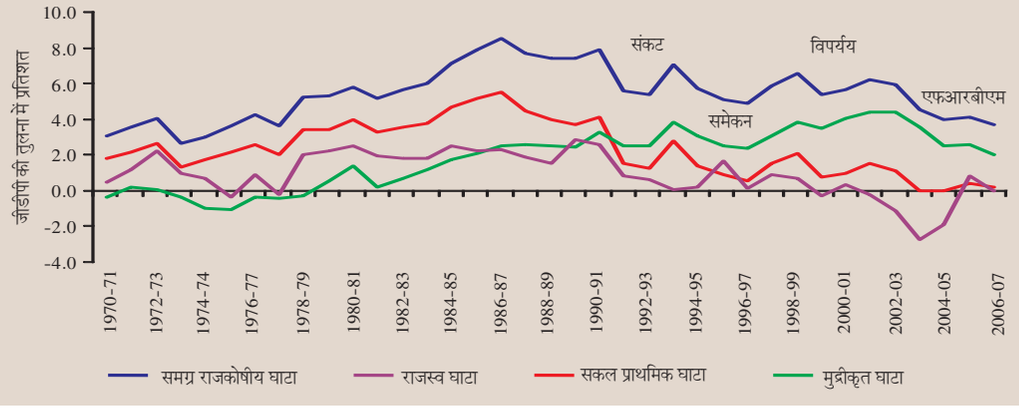

और अंततः, खुदरा ऋण, विशेष रूप से आवास के लिए सुदृढ़ मांग को उत्तरदायी माना जा सकता है। 1997-2003 की अवधि के दौरान बैंकों द्वारा बनाए गए अत्यधिक एसएलआर प्रतिभूतियों के सुरक्षित भंडार ने बैंकों को 2003-04 की अवधि में ऋण वृद्धि को और निधि उपलब्ध कराने के लिए इन अत्यधिक निवेशों को कम करने का अवसर प्रदान किया। इस प्रकार, यद्यपि वर्तमान दशक में समग्र एम$_3$ वृद्धि 1990 के दशक की तुलना में व्यापक रूप से अपरिवर्तित रही है, बैंक ऋण की वृद्धि काफी अधिक हो गई है। तदनुसार, एम$_3$ वृद्धि को अलग से देखना भ्रमात्मक हो सकता है, यह समान रूप से महत्वपूर्ण है कि घटकों और मुद्रापूर्ति के स्रोतों के विश्लेषण के माध्यम से मुद्रा आपूर्ति के अंतर्निहित गति विज्ञान को समझा जाए।

अब, वास्तविक एसएलआर धारिताओं के निर्धारित सीमा के पास होने के कारण, भविष्य में, बैंक ऋण और बैंक एसएलआर निवेश में वृद्धि उनकी जमा वृद्धि के अनुरूप होगी। इस प्रकार, उच्च ऋण वृद्धि के साथ मुद्रा आपूर्ति में उच्च वृद्धि होने की संभावना है। चूँकि संचित अनुभववादी प्रमाण स्पष्ट रूप से बतलाते हैं कि उच्च मुद्रा आपूर्ति वृद्धि की निरंतर अवधि परिणामी रूप से उच्च मुद्रास्फीति के साथ जुड़ी हुई है, भले ही थोड़ी ही अवधि के लिए हो, मुद्रा आपूर्ति और मुद्रास्फीति के बीच संबंध कमजोर होगा। इस पृष्ठभूमि में, हमें इस तथ्य से सतर्क रहना होगा कि पिछले दो वर्षों में एम$_3$ वृद्धि प्रतिवर्ष 20 प्रतिशत के ऊपर रही है। निरंतर उच्च वृद्धि यथोचित समय पर मुद्रास्फीतिक हो सकती है; इसलिए, रिज़र्व बैंक हाल में मौद्रिक और ऋण गतिविधियों के विश्लेषण पर अधिक जोर दे रहा है। यह दुहराने की आवश्यकता है कि पिछले दशक में मुद्रास्फीति के कम होने और मुद्रास्फीतिक प्रत्याशाओं के घटने से समग्र ब्याज दर ढाँचे में कुछ कमी आई, जिसने ब्याज चुकौती के भार को कम करने में सरकार और निजी कंपनी क्षेत्र दोनों की मदद की, जिससे क्षेत्रीय बचतों की वृद्धि में योगदान मिला।

भारतीय अर्थव्यवस्था की समष्टि आर्थिक समीक्षा निवेश, बचत और उत्पादकता में सुधार द्वारा समर्थित, हाल के वर्षों में उच्च वृद्धि मार्ग पर ले जाने के लिए आधारभूत तत्वों के सुदृढ़ीकरण का मशविरा देती है। साथ ही, आगामी पांच वर्षों में बचत और निवेश के लिए संभावनाओं को बतलाने और वृद्धि गति को बनाए रखने के लिए कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को संबोधित किए जाने की आवश्यकता है।

II आगामी पांच वर्षों के लिए संभावनाएं

वास्तविक जीडीपी वृद्धि को 8-9 प्रतिशत की सीमा में बनाए रखने के संकेतात्मक अनुमानों के अनुसार, आगामी पाँच वर्षों में वृद्धि संभावनाओं के पूर्व संकेतक ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में दिए गए हैं। इसके बाद, ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-08 से 2011-12) के लिए बचतों पर बने कार्यदल (अध्यक्ष : डा. राकेश मोहन) (मई 2007) ने इसका पुनर्मूल्यांकन किया। इस समूह ने अनुमान लगाया कि वास्तविक जीडीपी वृद्धि को 8-9 प्रतिशत की सीमा में बनाए रखने के लिए 2004-05 में 29.1 प्रतिशत की तत्कालीन जीडीएस दर और 30.1 प्रतिशत की निवेश दर के आधार पर, निवेश दर को जीडीपी के 36-38 प्रतिशत और सकल घरेलू बचत दर को जीडीपी के 34-35 प्रतिशत की सीमा में बढ़ाने की आवश्यकता होगी। बचत-निवेश अंतर को घरेलू वित्तीय बचत में लगभग 1 प्रतिशत अंक की वृद्धि करके अर्थात उसे 2004-05 में जीडीपी के 10.3

प्रतिशत से बढ़ाकर 11.4 करके वित्तपोषित किए जाने का अनुमान लगाया गया । बचत-निवेश अंतर के शेष हिस्से को चालू खाता घाटे को लगभग 1-2 प्रतिशत अंक बढ़ाकर अर्थात उसे 2004-05 में जीडीपी के 1 प्रतिशत से बढ़ाकर 2.1 - 2.8 प्रतिशत की सीमा में लाकर शेष विश्व क्षेत्र द्वारा वित्तपोषित किए जाने का अनुमान लगाया गया।

इस पृष्ठभूमि में, भावी संभावनाओं का पता लगाने के लिए नवीनतम उपलब्ध सूचना को हिसाब में लेने की आवश्यकता है। जनवरी 2008 में केंद्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा जारी त्वरित अनुमानों के अनुसार, वास्तविक जीडीपी वृद्धि के 2005-06 के 9.4 प्रतिशत और 2004-05 के 7.5 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 9.6 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है। वृद्धि की गति को, निवेश दर के 2004-05 के 32.2 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 35.9 प्रतिशत होने से, साथ ही घरेलू बचत दर के 31.8 प्रतिशत से बढ़कर 34.8 प्रतिशत होने से समर्थन मिला। तदनुसार, बचत-निवेश अंतर 2004-05 में जीडीपी के (-) 0.4 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में (-) 1.1 प्रतिशत हो गया।

जैसा कि पूर्व के विश्लेषण दर्शाते हैं, वृद्धि की गति को बनाए रखना सार्वजनिक वित्त की निरंतर प्रगति, निजी कंपनी क्षेत्र की वर्धित भूमिका तथा घरेलू वित्तीय बचतों को बढ़ावा देने के लिए वित्तीय क्षेत्र की और गहनता पर निर्भर होगा। घरेलू कारकों के अलावा, यह व्यापक रूप से माना जा रहा है कि वैश्विक कारक भारतीय अर्थव्यवस्था के क्रमिक खुलेपन को देखते हुए पहले की अपेक्षा और अधिक भूमिका निभाएंगे जिसका परिणाम पारंपरिक व्यापार समन्वयन के अलावा और अधिक वित्तीय समन्वयन होगा।

उन कारकों में, जिन पर सार्वजनिक क्षेत्र की संभावनाओं को तैयार किए जाने पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है, शामिल हैं; एफआरबीएम अधिनियम के अन्तर्गत शेष अवधि में और उसके बाद सार्वजनिक वित्त में प्रगति, छठे वेतन आयोग की सिफारिशों के संभावित प्रभाव का दायरा और मानक तथा व्ययों को सुकर बनाना। 2007-08 के लिए उपलब्ध सूचना करों में निरंतर वृद्धि को दर्शाती है जिसमें आयकर, निगमकर, सीमा शुल्क, सेवा कर और नए करों में आकर्षक वृद्धि दिखी है। यह मानते हुए कि केंद्र सरकार 2008-09 तक एफआरबीएम के लक्ष्यों को पूरा कर लेगी और राज्य भी अपने राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान के लक्ष्यों को पूरा कर लेंगे, जिन्हें कर में बनी हुई उछाल और समुचित व्यय प्रबंधन से समर्थन मिलेगा, सरकारी प्रशासन के अधिव्यय के 2006-07 में 55,811 करोड़ रुपए (जीडीपी के 1. 3 प्रतिशत) से और घटकर केंद्र और राज्य दोनों के राजस्व घाटों में जीडीपी के शून्य प्रतिशत के लक्ष्य की प्राप्ति के बराबर होने की आशा है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, 2002-2007 के दौरान गैर विभागीय उपक्रमों की बचत दरें, जो जीडीपी का लगभग 4 प्रतिशत थीं तथा 0.6 प्रतिशत के लगभग विभागीय उद्यमों की बचत दरें आगामी पाँच वर्षों में जारी रहने की संभावना है।

तथापि, इन संभावनाओं से संबंधित कुछ जोखिम छठे वेतन आयोग अवार्ड के कार्यान्वयन में देखा जा सकता है। जबकि छठे वेतन आयोग की सिफारिशों

को अभी तक अंतिम रूप नहीं दिया गया है, इसके संभावित प्रभावों को पांचवें वेतन आयोग के अनुभवों से पता किया जा सकता है जिसे 1997-98 से कार्यान्वित किया गया था। पांचवें वेतन आयोग के अवार्ड को कार्यान्वित करने के परिणाम के रूप में, केंद्र सरकार की देयताओं के फरवरी 1998 के अंत में 18,500 करोड़ रुपए होने का अनुमान लगाया गया है। यह प्रभाव 1997-98 से 2000-01 के बीच फैला हुआ है, बजाय 1997-98 में मात्र एकल प्रभाव होने के (सारणी 9)। जीडीपी के अनुपात के रूप में, केंद्र सरकार की मजदूरी, वेतन और पेंशन का अनुपात, जो 1996-97 में 2.7 प्रतिशत से बढ़कर 2000-01 तक तीन वर्षों में 3.3 प्रतिशत हो गया था, 2003-04 में घटकर लगभग 2.7 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार, पाँचवें वेतन आयोग का कुल प्रभाव चार वर्षों की अवधि में प्रति वर्ष जीडीपी के 0.6 प्रतिशत के लगभग था - केंद्र सरकार के लिए 2.4 प्रतिशत का संचित प्रभाव। राज्य सरकारों के मामले में, वेतन व्यय के बजट आंकड़ों के उपलब्ध न होने के कारण, पाँचवें वेतन आयोग के प्रभाव को प्रॉक्सी से पता किया जा सकता है जिसकी सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक सेवाओं में गैर योजना राजस्व व्यय के रूप में गणना की जाती है। यह प्रभाव वर्ष 1999-2000 से दृष्टिगोचर हुआ जब जीडीपी के अनुपात के रूप में प्रोक्सी संकेतक, 2001-02 में 6.7 प्रतिशत पर वापस आने से पहले, 1998-99 में 6.6 प्रतिशत से बढ़कर 1999-2000 में 7.0 प्रतिशत और 2000-01 में 7.2 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार, राज्यों के लिए पांचवें वेतन आयोग का प्रभाव जीडीपी का लगभग 0.4 - 0.6 प्रतिशत रहा (दो वर्ष की अवधि में 1.0 प्रतिशत का संचयी प्रभाव)। इस प्रकार, केंद्र और राज्यों का संयुक्त प्रभाव जीडीपी का कुल 1.0 प्रतिशत रहा (3.4 प्रतिशत का संचयी प्रभाव)। पांचवें वेतन आयोग के प्रभाव को अवशोषित करने के लिए, सरकार ने इसे अतिरिक्त स्रोत संग्रहण और व्यय घटाने वाले उपायों के माध्यम से वहन करने की योजना बनाई। तथापि, जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है, 1990 के दशक के उत्तरार्ध में कर - जीडीपी अनुपात में गिरावट आई, जिसने सरकारी वित्तों पर प्रभाव को बढ़ाया।

सारणी 9 : पांचवें वित्त आयोग का प्रभाव

(करोड़ रुपये)

	1996-97	1997-98	1998-99	1999-00	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
मजदूरी, वेतन और पेंशन										
केंद्र सरकार	37,050 (2.7)	50,016 (3.3)	57,205 (3.3)	64,828 (3.3)	66,109 (3.1)	64,040 (2.8)	70,646 (2.9)	73,477 (2.7)	80,825 (2.6)	90,628 (2.5)
राज्य सरकारे (समेकित)*	91,178 (6.7)	99,568 (6.5)	1,15,576 (6.6)	1,35,732 (7.0)	1,50,776 (7.2)	1,52,530 (6.7)	1,58,812 (6.5)	1,84,718 (6.7)	1,84,730 (5.9)	2,06,889 (5.8)

* : राज्यों का योजनेतर राजस्व व्यय सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक सेवाओं के लिए किया जा रहा है।

टिप्पणी : कोष्ठक में दिए गए आंकड़े जीडीपी की तुलना में प्रतिशत को दर्शाते हैं।

स्रोत : 1. केंद्रीय सरकार बजट, भारत सरकार का एक आर्थिक और कार्यात्मक वर्गीकरण।
2. 'राज्य वित्त: एक बजट अध्ययन', भारिबैं के विभिन्न अंकों के लेख।

भविष्य में, यह मानते हुए कि छठे वेतन आयोग के प्रभाव की सीमा समानुपातिक रूप से पांचवें वेतन आयोग के समान होगी, 3-4 वर्ष की अवधि के दौरान व्ययों पर दबाव की राशि केंद्र और राज्यों के लिए प्रति वर्ष जीडीपी का लगभग 1.0 प्रतिशत होगी। पांचवे वेतन आयोग के दौरान की स्थिति से अलग, छठे वेतन आयोग का कार्यान्वयन तभी किया जाएगा जब अर्थव्यवस्था में उच्च कर आधिक्य होगा - केंद्र का कर-जीडीपी अनुपात 2002-03 के 8.8 प्रतिशत से 2.6 प्रतिशत अंक बढ़कर 2006-07 (सं.अ.) में 11.3 प्रतिशत हो गया है। वृद्धि की गति को बनाए रखने के हित में, यह आवश्यक है कि छठे वेतन आयोग के प्रभाव को राजकोषीय समेकन की प्रक्रिया को बिना कमजोर किए अवशोषित किया जाए। केंद्रीय स्तर पर प्रत्यक्ष करों और सेवा करों और राज्य स्तर पर वैट के आधिक्य को देखते हुए, इस समय यह अवसर है कि केंद्र और राज्य दोनों स्तरों पर इसे पूरा किया जाए। एफआरबीएम के अनुपालन के लिए बेहतर कर अनुपालन के निरंतर प्रयास, सब्सिडी को कम करने के नवीन प्रयास, और करेतर राजस्व को बढ़ाने के लिए उपयुक्त प्रयोक्ता प्रभारों को लगाने की आवश्यकता होगी।

निजी कंपनी क्षेत्र की संभावनाओं के संबंध में, पिछले चार वर्षों में सुदृढ़ गति से हुई निवल लाभ की वृद्धि में कुछ गिरावट के आरंभिक चिह्न दिखे हैं, तथापि, कंपनी लाभदायकता की वृद्धि में अब भी आधिक्य बना हुआ है और मामूली जीडीपी वृद्धि से अधिक है। इसी प्रकार, घरेलू अर्थव्यवस्था, आंतरिक और बाह्य दोनों, में बढ़ती स्पर्धा पर विचार करने की आवश्यकता होगी। इसके अलावा, कंपनी क्षेत्र के सुधार के प्रारंभिक लाभ, विशेष रूप से तुलन पत्र के डिलीवरेजिंग के द्वारा, भविष्य में उसी मात्रा में उपलब्ध नहीं होंगे। इस प्रकार, यह मान लेना तर्कसंगत होगा कि कंपनी बचत दर, जो 2002-2007 की अवधि के दौरान दो गुना होकर जीडीपी का 7.8 प्रतिशत हो गई थी, आगामी कुछ वर्षों में स्थिर दिखेगी लेकिन इसके गिरने की आशा नहीं करनी चाहिए।

घरेलू क्षेत्र के संबंध में, त्वरित अनुमान दर्शाते हैं कि वित्तीय बचत 2006-07 के दौरान जीडीपी के लगभग 11.3 प्रतिशत पर स्थिर थी, जबकि भौतिक बचत दर कुछ घटी, लेकिन 2006-07 में जीडीपी के 12.5 प्रतिशत पर वित्तीय बचत की तुलना में अधिक बनी रही। बैंक जमाएं घरेलू वित्तीय बचतों का सबसे बड़ा अनुपात हैं और कुल में उनका हिस्सा, जो 1980 के दशक के दौरान घटा, 1990 के दशक से सुधर रहा है (सारणी 10)। पिछले वर्ष की तुलना में बैंक जमाओं की अधिकता - जनवरी 2008 को वर्ष दर वर्ष आधार पर लगभग 23.8 प्रतिशत की वृद्धि - आंशिक रूप से लघु बचतों से कुछ अंतरण को दर्शाती है, चूँकि इससे घरेलू क्षेत्र की आस्ति संविभाग संरचना में केवल अंतरण (शिफ्ट) का पता चला है; बैंक जमाओं में हाल की अधिकता समग्र घरेलू वित्तीय बचतों में ऊर्ध्वगामिता की ओर संकेत नहीं देती है। भविष्य की ओर देखते हुए, वित्तीय बचतों में सुधार वित्तीय क्षेत्र की और गहनता पर निर्भर होगा, विशेष रूप से बीमा और पेंशन सुधारों के माध्यम से। यह मानते हुए कि आगामी पाँच वर्षों में कर ढाँचा स्थिर रहेगा, वित्तीय बचतों की वृद्धि सांकेतिक आय में वृद्धि के साथ अपनी गति बनाए रखेगी।

इस प्रकार उभरते रुझानों के आधार पर, यह प्रत्याशा करना तर्कसंगत है कि घरेलू वित्तीय बचत

सारणी 10 : घरेलू वित्तीय बचतों के घटकों के हिस्से

(प्रतिशत)

	1970का दशक	1980का दशक	1990-91	1991-92 से 1996-97	1997-98 से 2002-03	2003-04 से 2006-07
1	2	3	4	5	6	7
मुद्रा	13.9	11.9	10.6	10.9	8.6	9.3
बैंक जमाराशियां	45.6	40.3	31.9	33.1	38.5	44.0
गैर-बैंकिंग जमाराशियां	3.0	4.6	2.2	9.4	2.9	0.7
जीवन बीमा निधि	9.0	7.5	9.5	9.5	13.1	14.6
भविष्य और पेंशन निधि	19.6	17.5	18.9	17.6	19.0	11.4
सरकार पर दावे	4.2	11.1	13.4	7.1	14.9	16.9
शेयर और डिबेंचर	1.5	3.9	8.4	8.3	3.7	3.9
यूटीआइ के यूनिट	0.5	2.2	5.8	5.0	0.1	-0.8
व्यापार ऋण (निवल)	2.7	0.9	-0.8	-0.8	-0.7	0.0
कुल वित्तीय बचत (सकल)	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकी हैंडबुक, भारिबैं, 2006-07।

दरें और कंपनी बचत दरें, दोनों, मोटे तौर पर, क्रमशः लगभग 11 प्रतिशत और 8 प्रतिशत पर बनी रहेंगी। दूसरी तरफ, सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दरों में सुधार छठे वेतन आयोग के प्रभाव के कारण रुक सकता है, लेकिन इसके गिरने की आशा नहीं है। कुल मिलाकर, समग्र जीडीएस दर में 2008-09, अर्थात एफआरबीएम के अंतिम वर्ष, में कुछ सुधार होगा जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र प्रमुख होगा और अगले तीन वर्षों में उसी स्तर के लगभग बना रहेगा।

III समस्याएं और चुनौतियां

हमने पिछले 50-60 वर्षों में भारतीय आर्थिक वृद्धि और समष्टि आर्थिक प्रबंधन की इस समीक्षा से क्या सीखा है? हम हाल के वर्षों में प्राप्त की गई वृद्धि की गति को जारी रखना कैसे सुनिश्चित रखेंगे?

एक, भारतीय आर्थिक वृद्धि को घरेलू बचतों की उपलब्धता ने व्यापक रूप से समर्थन दिया है। दशकों में इसकी वृद्धि की निरंतर गति, जीडीपी के अनुपात के रूप में व्यक्त, घरेलू बचतों के स्तर में निरंतर वृद्धि के साथ-साथ रही है। भारत में उभरते वित्तीय क्षेत्र में मौजूद सभी कमियों और गड़बड़ियों के बावजूद, संसाधनों के उपयोग की कार्यकुशलता अधिक रही जिसमें दीर्घकालिक वृद्धिशील पूँजी उत्पाद 4 प्रतिशत के लगभग है, जिसकी तुलना विश्व की सर्वाधिक उपलब्धि वाले देशों से की जा सकती है। इसलिए, 10 प्रतिशत + वृद्धि को प्राप्त करने के लिए, हमें घरेलू, निजी कंपनी क्षेत्र, सार्वजनिक कंपनी क्षेत्र और सरकार जैसे प्रत्येक क्षेत्र में बचत में वृद्धि को बनाए रखने हेतु बढ़ावा देने की आवश्यकता होगी।

दो, वृद्धि में हाल की गति को निजी क्षेत्र के निवेश में बढ़ोत्तरी और कंपनी वृद्धि से समर्थन मिला। ऐसा निजी बचतों पर सार्वजनिक क्षेत्र के आहरण को घटा कर राजकोषीय कार्यनिष्पादन में सुधार से संभव हुआ, इस प्रकार निजी क्षेत्र के उपयोग के लिए संसाधन उन्मुक्त हो गए। इसलिए वृद्धि की गति को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक होगा कि केंद्र और राज्य सरकार दोनों के स्तरों पर राजकोषीय विवेक को लाने के उपाय जारी रहें।

तीन, अपनी बचतों को बढ़ाने के माध्यम से निजी कंपनी क्षेत्र के संसाधनों के उत्पादन को सांकेतिक ब्याज दरों में कमी से बहुत अधिक सहायता मिली, ऐसा विवेकपूर्ण मौद्रिक नीति के द्वारा मुद्रास्फीति में लगातार कमी के माध्यम से संभव हो सका। भारतीय मुद्रास्फीति, जो यद्यपि अपने ऐतिहासिक मानकों के अनुसार अभी कम है, विश्व मुद्रास्फीति की तुलना में अभी भी अधिक बनी हुई है और इसलिए, इसको और कम किए जाने की आवश्यकता है। यह केवल तभी होगा जब मध्यमकाल में मुद्रास्फीति तथा मुद्रास्फीतिक प्रत्याशाओं में और निरपेक्ष कमी हो ताकि भारतीय ब्याज दरें लगातार आधार पर अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पहुँच सकें। इसलिए, हमारे लिए यह जरूरी है कि भारत में मुद्रास्फीति की संरचना को समझने के लिए हमें अपनी समझ को बढ़ाना होगा कि वास्तविक अर्थव्यवस्था में मौद्रिक नीति द्वारा कितना किया जा सकता है और अन्य कार्यों द्वारा कितना किया जा सकता है, जिससे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में, विशेष रूप से इन्फ्रास्ट्रक्चर में, पूर्ति और मांग की कमीबेशी को दूर किया जा सके। कम और स्थिर मुद्रास्फीति की मौजूदगी का कंपनी निवेश के उच्च स्तर को बनाए रखने पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है जिससे सांकेतिक और वास्तविक ब्याज दरें कम और स्थिर हो जाती हैं।

चार, जबकि हाल के वर्षों में राजकोषीय सुधार में विश्वसनीय गति आई है, इसमें से कुछ को सार्वजनिक निवेश में कमी करके प्राप्त किया गया है। जबकि क्षेत्रों, आवश्यक रूप से निजी माल और सेवाओं का उत्पादन करने वाले क्षेत्रों में सार्वजनिक से निजी निवेश में वांछनीय अंतरण हुआ है और सार्वजनिक कल्याण और निजी कल्याण दोनों पहलुओं वाले क्षेत्रों में सार्वजनिक निजी सहभागिता का चलन शुरू हुआ है; इसलिए यह मानना आवश्यक है कि सार्वजनिक सेवाओं का उत्पादन करने वाले क्षेत्रों में सार्वजनिक निवेश आवश्यक है। सब्सिडी में पुनर्संरचना और कटौती के माध्यम से जारी राजकोषीय सुधार और कर राजस्व के संग्रहण के प्रति निरंतर ध्यान सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों को बढ़ाने के लिए आवश्यक है जो सार्वजनिक निवेश के स्तर में वृद्धि को वित्तपोषित कर सकता है। यदि ऐसा नहीं किया जाता है, निजी कंपनी क्षेत्र निवेश रुक जाएगा, और आवश्यक सार्वजनिक इन्फ्रास्ट्रक्चर की उपलब्धता में कमीबेशी से मुद्रास्फीतिक दबाव आएंगे और प्रतिस्पर्धा की कमी भी होगी। आबंटन में कार्यकुशलता और संसाधनों के प्रयोग को ग्रामीण और शहरी इन्फ्रास्ट्रक्चर दोनों में बेहतर मूल आधारभूत सुविधाओं से बहुत अधिक मदद मिलेगी; इसमें से अधिकांश को सार्वजनिक निवेश के बढ़े हुए स्तर की आवश्यकता होगी।

पाँच, भारतीय सुधार प्रक्रिया की एक बड़ी सफलतापूर्ण कहानी अर्थव्यवस्था का क्रमिक खुलाव रहा है। एकतरफ, व्यापार उदारीकरण और शुल्क सुधारों ने भारतीय कंपनियों की, लगभग विश्व मूल्य पर वैश्विक रूप से उपलब्ध बेहतर इनपुट तक, पहुँच को बढ़ा दिया है। दूसरी तरफ, क्रमिक खुलाव ने भारतीय कंपनियों को पर्याप्त रूप से समायोजित करके विश्व बाजार में तथा घरेलू अर्थव्यवस्था में आयात के साथ प्रतिस्पर्धा योग्य बनाया है। हाल के वर्षों में उत्पाद वृद्धि और लाभ वृद्धि दोनों में कंपनी क्षेत्र का निष्पादन इसका प्रमाण है। इसलिए यह आवश्यक है कि हम शुल्क सुधारों को जारी रखें जब तक हम एशियन स्तर तक पहुंचने के वर्तमान निर्धारित लक्ष्य से परे विश्व स्तर तक नहीं पहुँच जाते।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, भारत का चालू खाता घाटा ऐतिहासिक रूप से और हाल के वर्षों में 1 से 1.5 प्रतिशत के लगभग बना हुआ है। पूँजी प्रवाह के वर्तमान स्तर से पता चलता है कि चालू खाता घाटे की कुछ बढ़ोत्तरी को बड़ी मुश्किल से वित्तपोषित किया जा सका; वास्तव में, ग्यारहवीं योजना में 2.5 से 3.0 प्रतिशत के स्तर की वृद्धि की बात कही गई है। यदि ऐसा होता है तो इसे सावधानीपूर्वक देखे जाने की आवश्यकता है; हमें यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि ऐसी बढ़ोत्तरी अन्तरराष्ट्रीय विश्वास को कम न करे, जिससे पूँजी प्रवाह में कमी आएगी।

यह रुचिकर बात है कि कुछ अनुभववादी अध्ययन इस बात का प्रमाण नहीं पाते कि अधिक खुलाव और अधिक पूँजी प्रवाह से अधिक वृद्धि हो सकती है (प्रसाद, राजन और सुब्रमणियन, 2007)। इन लेखकों ने पाया है कि गैर औद्योगिक देशों के बीच चालू खाता शेषों और वृद्धि के बीच सकारात्मक सह संबंध है । इसका तात्पर्य है कि विदेशी पूँजी पर कम निर्भरता उच्च वृद्धि से जुड़ी हुई है। वैकल्पिक विनिर्देशों को ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिला है कि विदेशी पूँजी अंतर्वाहों में वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से वृद्धि को बढ़ावा देती है। इन परिणामों का कारण यह तथ्य है कि सफल विकासशील देशों के पास भी विदेशी संसाधनों के लिए सीमित अवशोषणात्मक क्षमता है या तो उनके वित्तीय बाजार अल्प विकसित है अथवा क्योंकि उनकी अर्थव्यवस्थाएं तीव्र पूंजी अन्तर्वाह के कारण अतिमूल्यन के प्रति प्रवण हैं। इस प्रकार, पूँजी खाता उदारीकरण के प्रति एक सतर्क दृष्टिकोण समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थायित्व के लिए लाभकारी होगा।

दूसरी तरफ, हेनरी (2007) का तर्क है कि अधिकांश वर्तमान अध्ययनों की अनुभववादी कार्य प्रणाली त्रुटिपूर्ण है क्योंकि ये अध्ययन वृद्धि पर पूँजी खाता उदारीकरण के स्थायी प्रभाव को खोजने का प्रयास करते हैं, जबकि सिद्धांत का वृद्धि दर पर केवल अस्थायी प्रभाव पड़ता है। एक बार यह अंतर पता चला गया तो अनुभववादी प्रमाण बतलाते हैं कि किसी देश के अन्तर्गत पूँजी खाते को खोलना, लगातार आर्थिक रूप से व्यापक और सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण प्रभावों को न केवल आर्थिक वृद्धि पर बल्कि पूँजी और निवेश की लागत पर भी उत्पन्न करता है। तथापि, लाभकारी प्रभाव विशेष रूप से ऋण और इक्विटी प्रवाहों के उदारीकरण से संबंधित नीतियों पर पूँजी खाते को खोलने के प्रति दृष्टिकोण के प्रति निर्भर है। हाल के अनुसंधान दर्शाते हैं कि ऋण प्रवाह का उदारीकरण - विशेष रूप से अल्पकालिक-डालर में मूल्यवर्गित ऋण का प्रवाह - समस्याएं पैदा कर सकता है। दूसरी तरफ, प्रमाण दर्शाते हैं कि देशों को विदेशी निवेशकों के लिए अपना इक्विटी बाजार खोलने से काफी लाभ होता है (हेनरी, ओपी सीआइटी)।

पूँजी खाते के प्रति हमारे दृष्टिकोण ने ऋण और ईक्विटी के बीच स्पष्ट अंतर किया है, जिसमें ईक्विटी बाजार और ऋण बाजार के उदारीकरण के लिए और अधिक अधिमान्यता दी गई है (मोहन, 2007 क)। ईक्विटी बाजार जोखिम पूँजी प्रदान करते हैं और ऐसा करना वृद्धि के लिए लाभपूर्ण हो सकता है। दूसरी तरफ, मुद्रास्फीति और ब्याज अंतरों को देखते हुए, विदेशी निवेशकों के लिए घरेलू ऋण बाजार को खोलना, जैसा कि वर्तमान में भारत में है, अंतरपणन पूँजी की बड़ी राशि को बढ़ावा दे सकता है। उच्च घरेलू ब्याज दरों

को देखते हुए, खुला ऋण बाजार बड़ी मात्रा में पूँजी प्रवाह को आकर्षित कर सकता है और पूँजी प्रवाह की वर्तमान मात्रा में बढ़ोत्तरी कर सकता है जो देश की वित्तीयन आवश्यकता से काफी अधिक है। यदि ऋण बाजार को खुला किया जाता है, तो ऐसे अत्यधिक पूँजी प्रवाह को घरेलू समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थायित्व को बनाए रखने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा आवश्यक रूप से निष्प्रभावी करना पड़ेगा। इससे देश के वित्तीय क्षेत्र और सरकार द्वारा पहले से ही वहन की जा रही निष्प्रभावीकरण की लागत और बढ़ेगी। इस प्रकार भारत में ऋण प्रवाह उच्चतम सीमा के अधीन होगा और ऐसी उच्चतम सीमा तब तक उचित होगी जब तक उच्चतर मुद्रास्फीति और ब्याज दरों के कारण हुए अंतर काफी कम नहीं हो जाते।

अंत में, हमें यह स्वीकारना होगा कि बचतों और निवेश का बढ़ा हुआ स्तर तथा पूँजी प्रवाह और व्यापार का बढ़ा हुआ स्तर, सभी वित्तीय मध्यस्थता की सक्षम प्रणाली को आवश्यक बना देंगे। घरेलू बचतों को और बढ़ाने के लिए, घरेलू क्षेत्र में पर्याप्त सांकेतिक और वास्तविक प्रतिफलों को जारी रखने की आवश्यकता होगी। वित्तीय मध्यस्थता की प्रभावकारिता तब इस प्रकार होगी जिससे वित्तीय बचतों का वास्तव में बेहतरीन उपयोग किया जा सके।

विगत की तरह, घरेलू बचतें विशाल निवेश आवश्यकताओं का वित्तीयन करेंगी। इस संदर्भ में, बैंकिंग प्रणाली वित्तीयन का एक महत्वपूर्ण स्रोत बनी रहेगी और बैंक ऋण के लिए मांग सुदृढ़ होगी। यद्यपि, 2003-04 से बैंक ऋण में तीव्र वृद्धि हुई है, यह मान लेना होगा कि ऋण-जीडीपी अनुपात अभी भी सापेक्षिक रूप से कम बना हुआ है। इसके अलावा, आबादी का एक बड़ा भाग बैंकिंग सेवाओं से वंचित बना हुआ है। चूँकि वृद्धि प्रक्रिया मजबूत हुई है तथा और अधिक समावेशी हो गई है; यह आशा है कि आगामी वर्षों में वित्तीय उत्पादों की मांग में उच्च वृद्धि जारी रहेगी। इस प्रकार, यह संभव है कि बैंक ऋण और मौद्रिक समुच्चयों में वृद्धि उसकी तुलना में अधिक हो सकती है, जो निरंतर संरचनात्मक परिवर्तनों को देखते हुए ऐतिहासिक संबंधों और नमनीयताओं से अपेक्षित है। इससे केंद्रीय बैंक के लिए मौद्रिक/ऋण प्रसार के उचित क्रम जैसा एक महत्वपूर्ण मामला उठ खड़ा होता है। मानक के अभाव में, मौद्रिक कमी को देखते हुए, मुद्रा आपूर्ति में अत्यधिक वृद्धि, कुछ समय सशक्त रूप से मुद्रास्फीतिक दबावों के रूप में दिख सकती है। वास्तव में, वैश्विक चलनिधि आधिक्य को सारे विश्व में हाल के मुद्रास्फीतिक दबाव के लिए उत्तरदायी माना जा सकता है। पारंपरिक रूप में मापे गए अनुसार मौद्रिक दबाव के अभाव में अत्यधिक मुद्रा और ऋण वृद्धि आस्ति मूल्यों में भी अधिक वृद्धि कर सकती है, जिसका बैंकिंग क्षेत्र के स्थायित्व पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है तथा पारंपरिक मुद्रास्फीति का काल और बढ़ सकता है। इस प्रकार, रिज़र्व बैंक को प्रणाली को समुचित चलनिधि उपलब्ध कराने के लिए निरंतर चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा जिससे गैर मुद्रास्फीतिक वातावरण में वृद्धि सुनिश्चित हो सके। इससे मुद्रास्फीति, आस्ति मूल्य और मौद्रिक/ऋण विस्तार के कारण प्रणालीगत चलनिधि के संकेतों को पढ़ने में स्पष्टता का मामला महत्वपूर्ण हो जाता है।

क्षेत्रीय चरण में, एक प्रमुख मुद्दा कृषि वृद्धि है। वास्तव में, ऐतिहासिक समीक्षा सुदृढ़तापूर्वक बतलाती है कि धीमी समग्र वृद्धि की अवधि अनिवार्य रूप से धीमी कृषि वृद्धि द्वारा प्रभावित रही है, हाल के वर्षों में भी जब जीडीपी में कृषि का भार काफी घटा है।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय वृद्धि दर कृषि के लिए लगभग 4 प्रतिशत, सेवा क्षेत्र के लिए 10 प्रतिशत और उद्योग के लिए 10.5 प्रतिशत (12 प्रतिशत विनिर्माण वृद्धि सहित) होने का अनुमान लगाया गया है। जबकि उद्योग और सेवा क्षेत्र के लिए लक्ष्य प्राप्त करने योग्य हैं, ग्यारहवीं योजना के दौरान 9 प्रतिशत वृद्धि के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लगभग 4 प्रतिशत की कृषि वृद्धि बनाए रखना एक प्रमुख चुनौती होगी, विशेषरूप से क्योंकि यह क्षेत्र कई संरचनात्मक कठिनाइयों से ग्रस्त है जैसे प्रौद्योगिकी अंतराल, समय पर कारक इनपुट की उपलब्धता, इनपुट और उत्पादन दोनों के लिए कार्यकुशल बाजारों का अभाव और निरंतर नीति व्यतिक्रम। हाल के वर्षों में कृषि निष्पादन में कुछ सुधार के बावजूद, प्रमुख फसलों के उत्पादन और उत्पादकता का बुआई मौसम के दौरान बारिस के द्वारा प्रभावित होना जारी है। इसलिए, संस्थागत सहायता के अलावा, तात्कालिक आवश्यकता उच्च सार्वजनिक निवेश के माध्यम से सिंचाई सुविधाओं में सुधार करना और अन्य विभिन्न तरीकों के माध्यम से फसल क्षेत्र तथा उपज को बढ़ाना है। इसके लिए सार्वजनिक निवेश और बेहतर प्रबंधन की आवश्यकता होगी (मोहन, 2006ख)।

बेहतर कृषि निष्पादन न केवल वृद्धि को जारी रखने बल्कि कम और स्थिर मुद्रास्फीति को बनाए रखने के लिए भी महत्वपूर्ण है। अन्तरराष्ट्रीय तौर पर अस्थिर कृषि उत्पादन और कमतर खाद्यान्न भंडारों से विश्वस्तर पर और भारत दोनों में खाद्यों के मूल्य में वृद्धि, जिससे समग्र मुद्रास्फीति प्रभावित होती है, की चिंताएं बढ़नी शुरू हो गई हैं। इसलिए, मध्यम काल में न केवल फसल उपज को सुधारने के प्रयास करने होंगे बल्कि मांग-पूर्ति की विषमताओं को दूर करने तथा खाद्य मुद्रास्फीति से निपटने के लिए एक दीर्घकालिक समाधान निकालने हेतु कृषि फसलों के लिए एक बाजार प्रेरित प्रोत्साहन प्रणाली भी शुरू करनी होगी। कृषि उपज में निरंतर सुधार के लिए कृषि अनुसंधान, विकास विस्तार के पुनरुज्जीवन पर और अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होगी।

आधारभूत सुविधाओं के संबंध में, योजना आयोग का अनुमान है कि वास्तविक जीडीपी वृद्धि के 9 प्रतिशत को बनाए रखने के लिए, जैसाकि ग्यारहवीं योजना में दिया गया है, आधारभूत सुविधाओं के निवेश को जीडीपी के लगभग 4.6 प्रतिशत के वर्तमान स्तर से बढ़ाकर 8 प्रतिशत करना चाहिए। इस प्रकार, आधारभूत संरचना में निवेश योजना अवधि के दौरान जीडीपी के तीन प्रतिशत से अधिक बढ़ने की आशा है; इसी अवधि में योजना आयोग का अनुमान है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की समग्र निवेश दर छह प्रतिशत अंक बढ़नी चाहिए। अन्य शब्दों में, समग्र निवेश की कुल वृद्धि में लगभग आधा आधारभूत सुविधाओं की आवश्यकताओं के कारण होने की आशा है। योजना अवधि के दौरान आधारभूत सुविधाओं में निवेश में ऐसी वृद्धि के लिए, सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र दोनों में निवेश को पहले की अवधि की तुलना में और अधिक तेजी से बढ़ाना होगा।

निजी क्षेत्र के आधारभूत निवेश में लगातार वृद्धि केवल उन क्षेत्रों में हो सकती है जिनमें पर्याप्त प्रतिफल दिखता हो, चाहे यह स्वयं के द्वारा हो अथवा सार्वजनिक निजी सहभागिता के माध्यम से हो। दूर संचार क्षेत्र के कार्यनिष्पादन में यह विश्वसनीय रूप से दिखा है। पर्याप्त प्रयोक्ता प्रभारों को लगाने और नीतिगत उपायों, जो इंफ्रास्ट्रक्चर राजस्व के प्रवाह को स्थायित्व प्रदान करते हैं, को करने के लिए पुनः ध्यान देना महत्वपूर्ण होगा (मोहन, 2004)।

इस संदर्भ में, यह देखे जाने की आवश्यकता है कि घरेलू इन्फ्रास्ट्रक्चर परियोजनाओं को धन प्रदान करने के लिए विदेशी मुद्रा मूल्यवर्गित उधारों का उपयोग करने में इस तथ्य की दृष्टि से मुद्रा बेमेल का जोखिम उत्पन्न हो सकता है कि ऐसी परियोजनाओं की आय घरेलू मुद्रा में होती है। इस प्रकार, अप्रत्याशित मुद्रा का आवागमन ऐसी परियोजनाओं को अक्षम बना सकता है, इससे भावी निवेश को खतरा उत्पन्न होगा। इसलिए इन्फ्रास्ट्रक्चर परियोजनाओं के विदेशी वित्तीयन में सावधानी बरतनी होगी, जब तक कि उनकी समुचित रूप से हेजिंग नहीं की जाती।

संदर्भ :

डी लांग, बी, 2003, "इंडिया सिंस इंडिपेंडेंस : ऐन एनेलेटिकल ग्रोथ नरेटिव," डी. रोड्रिक द्वारा संपादित, इन सर्च ऑफ प्रोसपेरिटी: एनेलेटिकल नरेटिव्स ऑन इकनॉमिक ग्रोथ, (न्यूजर्सी, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी, प्रेस)।

हेनरी, पीटर ब्लेयर (2007), "कैपिटल एकाउंट लिबरलाइजेशन : थ्योरी, इविडेंस, एंड स्पेकुलेशन", जर्नल ऑफ इकनॉमिक लिटरेचर, वाल्यू. XLV दिसंबर।

मोहन, राकेश (2004), "भारत में आधारभूत सुविधा विकास : उभरती चुनौतियां" फ्रांकोइस बाउरगुइगोन और बोरिस प्लेसकोविक में (संपा.)। "एनुअल वर्ल्ड बैंक कांफरेंस ऑन डेवलपमेंट इकनॉमिक्स : एक्सीलरेटिंग डेवलपमेंट", आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस और विश्व बैंक।

- (2006 क), ''वित्तीय क्षेत्र सुधार और मौद्रिक नीति: भारतीय अनुभव '' भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, जुलाई।

- 2006(ख) ''भारत में आर्थिक सुधार: हम कहाँ हैं और हमें कहाँ जाना है?'' भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, दिसंबर।

- 2007 (क) ''पूँजी खाता उदारीकरण और मौद्रिक नीति का संचालन : भारतीय अनुभव'', भारिबैं बुलेटिन, जुलाई।

- 2007(ख) ''भारत के वित्तीय क्षेत्र के सुधार : जोखिम कम करते हुए वृद्धि का पोषण करना'', भारिबैं बुलेटिन, दिसंबर।

पनागारिया, अरबिंद (2004) ''इंडिया इन दि 1980ज एंड 1990ज : ए ट्रिम्फ ऑफ रिफॉर्म्स,'' आइएमएफ वर्किंग पेपर डब्ल्यूपी/04/43।

प्रसाद, ईश्वर एस., रघुराम जी., राजन तथा अरविंद सुब्रमणियन (2007), ''फॉरेन कैपिटल एंड इकनॉमिक ग्रोथ'', ब्रुकिंग्स पेपर्स आन इकनॉमिक एक्टिविटी, 1।

रोड्रिक, दानी और अरविंद सुब्रमणियन (2004), "फ्रॉम "हिंदू ग्रोथ" टु प्रोडक्टिविटी सर्ज : द मिस्ट्री ऑफ दि इंडियन ग्रोथ ट्रांजीशन", आइएमएफ वर्किंग पेपर डब्ल्यू पी/04/77।

भारतीय रिज़र्व बैंक (2007), 2007-08 के लिए वार्षिक नीति वक्तव्य।

2007-08 के लिए मौद्रिक नीति पर वार्षिक वक्तव्य

विरमानी, अरविंद (2004), "इंडियाज इकनॉमिक ग्रोथ : फ्रॉम सोसलिस्ट रेट ऑफ ग्रोथ टू भारतीय रेट ऑफ ग्रोथ", वर्किंग पेपर 122, आइसीआरआइईआर।